उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

MAED-01

शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार

खण्ड

1

शिक्षा के दार्शनिक आधार

इकाई-1 5

दर्शन का स्वरूप एवं विषय क्षेत्र

इकाई-2 18

शिक्षा की अवधारणा एवं कार्य

इकाई-3 40

शिक्षा और दर्शन के बीच सम्बन्ध

इकाई-4 52

शिक्षा दर्शन का स्वरूप एवं आवश्यकता

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 एस0पी0 गुप्ता	निदेशक, शिक्षा विद्या शाखा, उ0प्र0रा0ट0मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 राम शकल पाण्डेय	पूर्व आचार्य,शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
प्रो0 हरिकेश सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

परिमापक

प्रो0 आर0 एस0 पाण्डेय	पूर्व आचार्य,शिक्षा शास्त्र विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सम्पादक

प्रो0 एन0 एन0 पाण्डेय	आचार्य, शिक्षा शास्त्र विभाग एम0 जे0 बी0 पी0 विश्वविद्यालय बरेली

लेखक

डॉ0 सुषमा सिंह	वरिष्ठ प्रवक्ता, शिक्षा शास्त्र विभाग, दीन दयाल उपाध्याय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, जून 2009,
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

MAED-01- शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार

खण्ड-1 शिक्षा के दार्शनिक आधार

इकाई-1 दर्शन का स्वरूप एवं विषय क्षेत्र

इकाई-2 शिक्षा की अवधारणा एवं कार्य

इकाई-3 शिक्षा और दर्शन के बीच सम्बन्ध

इकाई-4 शिक्षा दर्शन का स्वरूप एवं आवश्यकता

खण्ड-2 शिक्षा दर्शन के प्रमुख सम्प्रदाय

इकाई-5 प्रकृतिवाद

इकाई-6 आदर्शवाद

इकाई-7 प्रयोजनवाद

इकाई-8 यथार्थवाद तथा अस्तित्ववाद

खण्ड-3 शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार

इकाई-9 धर्म और शिक्षा

इकाई-10 जनतंत्र और शिक्षा

इकाई-11 शैक्षिक मूल्य

इकाई-12 अनुशासन और स्वतंत्रता

खण्ड-4 शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

इकाई-13 शिक्षा और समाज

इकाई-14 शिक्षा और राष्ट्रीयता

इकाई-15 शिक्षा और अन्तर्राष्ट्रीयता

इकाई-16 शिक्षा के विज्ञान

खण्ड 1 – शिक्षा के दार्शनिक आधार

खण्ड परिचय

इस खण्ड में चार इकाइयां हैं जो कि शिक्षा के दार्शनिक पक्ष से सम्बंधित है। प्रथम इकाई में दर्शन का स्वरूप एवं उसके विषय क्षेत्र का वर्णन दिया गया है। दूसरी इकाई शिक्षा की अवधारणा परिभाषा एवं उसके कार्यों से सम्बंधित है। तीसरी इकाई में शिक्षा और दर्शन के सम्बंध पर प्रकाश डालते हुए शिक्षा दर्शन और दर्शन पर शिक्षा की अन्योन्याश्रितता का वर्णन किया गया। चौथी इकाई में शिक्षा दर्शन का सम्प्रत्यय, स्वरूप एवं आवश्यकता की विवेचना की गयी है।

शिक्षा के दार्शनिक आधार को समझने के लिये यह आवश्यक है कि सर्वप्रथम दर्शन की संकल्पना स्वरूप एवं उसके विषय क्षेत्र को जाना जाये क्योंकि इसके आगे शिक्षा दर्शन के क्षेत्र में प्रवेश कर शिक्षा को उसकी देन के विषय में जानकारी प्राप्त करना है। दर्शन का क्रियात्मक एवं मूर्त पक्ष शिक्षा है अतः इसकी अवधारणा उद्देश्यों एवं कार्यों के विषय में ज्ञान अति आवश्यक है। इसीलिये तीसरी इकाई में दर्शन और शिक्षा दोनों को सामने रखकर इनके सम्बंधों की समीक्षा की गयी है। इसके साथ ही शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थी होने के कारण आपके लिये यह जानना अति आवश्यक है कि शिक्षा किससे प्रभावित है और किसको प्रभावित करती है। दर्शन और शिक्षा की अन्योन्याश्रितता के मुख्य कारण क्या हैं? यह हो सकता है कि दर्शन की संकल्पना आपको पूरी तरह से स्पष्ट न हो परन्तु आपके लिये यह अति आवश्यक है कि आपको शिक्षा की संकल्पना का स्पष्ट रूपसे ज्ञान हो और उसके दार्शनिक पक्ष एवं दर्शन के प्रभाव को आप समझें।

शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थी होने के कारण यह आपके लिये आवश्यक है कि आप शिक्षा के विचारात्मक पक्ष दर्शन और दर्शन के क्रियात्मक पक्ष शिक्षा को समझ लें क्योंकि दोनों का एक दूसरे पर प्रभाव विभिन्न काल से हीं सार्वविदित है और आपके शिक्षा दर्शन के स्वरूप एवं विषय क्षेत्र को जानकारी भी देने का प्रयास किया गया है कि शिक्षा किस प्रकार अपने विभिन्न पक्षों के सफल संचालन हेतु दर्शन का आश्रय लेकर उसे सिद्ध कर पाती है। जैसा कि आप जानते हैं कि शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है इसके द्वारा मनुकृष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कला–कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और उसे सुसभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। अतः शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया को मूल रूप में समझना आवश्यक है। इसकी चर्चा पूर्व की इकाई में विस्तार से की गयी है।

हमारा विश्वास है कि इस खण्ड की चारो इकाइयों के अध्ययन से आपका ज्ञानवर्धन होगा और आपकी रूचि एवं बुद्धि शिक्षाशास्त्र के अध्ययन में और प्रखर होगी। यह खण्ड आपको आगे शिक्षाशास्त्र विषय के अध्ययन हेतु एक मजबूत आधार प्रदान करेगा।

इकाई 1 दर्शन का स्वरूप एवं विषय क्षेत्र

संरचना–

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 दर्शन का सम्प्रत्यय

1.4 दर्शन की आवश्यकता

1.5 दर्शन का विषय क्षेत्र

1.6 दर्शन का उद्देश्य

1.7 दार्शनिक दृष्टिकोण की विशेषतायें

1.8 सारांश

1.9 अभ्यास कार्य

1.10 चर्चा के बिन्दु

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

मानव के द्वारा सभी देश में, सभी कालों में चिन्तन की क्रिया सतत् चलती रहती है और परिणामस्वरूप दर्शन का उद्भव होता है। इस दर्शन का प्रभाव शिक्षा एवं मानव जीवन पर पड़ता है। दर्शन एवं शिक्षा का अटूट सम्बंध होने से दर्शन का प्रभाव शिक्षा के उद्देश्य शिक्षा संगठन, पाठ्यक्रम, प्रशासन, नीति एवं शिक्षक–शिक्षार्थी पर परिलक्षित होता है। देश काल परिस्थिति के अनुसार समाज का दर्शन शैक्षिक नीति व स्वरूप को प्रभावित करता है। अतएव इसी दृष्टिकोण से दर्शन, इसकी संकल्पना, अध्ययन की आवश्यकता, उद्देश्य, विषय क्षेत्र एवं अध्ययन विस्तार आदि की जानकारी इस इकाई में देने का प्रयास किया गया है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपमें यह योग्यता विकसित हो जायेगी–

- दर्शन का भारतीय एवं पाश्चात्य सम्प्रत्यय स्पष्ट कर सकेगें।
- दर्शन की संकल्पना की विवेचना कर सकेगें।
- दर्शन की परिभाषा बता सकेंगें।

- दर्शन के अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व बता सकेंगे।
- दर्शन के विषय क्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।
- दर्शन के उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 दर्शन का अर्थ

दर्शन शब्द संस्कृत की दृश् धातु से बना है– ''दृश्यते यथार्थ तत्वमनेन'' अर्थात् जिसके द्वारा यथार्थ तत्व की अनुभूति हो वही दर्शन है। अंग्रेजी के शब्द फिलॉसफी का शाब्दिक अर्थ ''ज्ञान के प्रति अनुराग'' होता है। भारतीय व्याख्या अधिक गहराई तक पैठ बनाती है, क्योंकि भारतीय अवधारणा के अनुसार दर्शन का क्षेत्र केवल ज्ञान तक सीमित न रहकर समग्र व्यक्तित्व को अपने आप में समाहित करता है। दर्शन चिन्तन का विषय न होकर अनुभूति का विषय माना जाता है। दर्शन के द्वारा बौद्धिक तृप्ति का आभास न होकर समग्र व्यक्तित्व बदल जाता है। यदि आत्मवादी भारतीय दर्शन की भाषा में के कहा जाये तो यह सत्य है कि दर्शन द्वारा केवल आत्म–ज्ञान ही न होकर आत्मानुभूति हो जाती है। दर्शन हमारी भावनाओं एवं मनोदशाओं को प्रतिबिम्बित करता है और ये भावनायें हमारे कार्यों को नियंत्रित करती है।

1.3.1 दर्शन का भारतीय सम्प्रत्यय –

भारत में दर्शन का उद्गम असन्तोष या अतषप्ति से माना जाता है। हम वर्तमान से असन्तुष्ट होकर श्रेष्ठतर की खोज करना चाहते है। यही खोज दार्शनिक गवेषणा कहलाती है। दर्शन के विभिन्न अर्थ बताये गये हैं। उपनिषद् काल में दर्शन की परिभाषा थी–

जिसे देखा जाये अर्थात् सत्य के दर्शन किये जाये वही दर्शन है।

(दष्श्यते अनेन इति दर्शनम्– उपनिषद)

डा0 सर्वपल्ली राधाकष्ष्णन के अनुसार– दर्शन वास्तविकता के स्वरूप का तार्किक विवेचन है।

1.3.2 दर्शन का पाश्चात्य सम्प्रत्यय –

पाश्चात्य जगत में दर्शन का सर्वप्रथम विकास यूनान में हुआ। प्रारम्भ में दर्शन का क्षेत्र व्यापक था परन्तु जैसे–जैसे ज्ञान के क्षेत्र मे ंविकास हुआ दर्शन अनुशासन के रूप में सीमित हो गया।

प्लेटो के अनुसार– जो सभी प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखता है और सीखने के लिये आतुर रहता है कभी भी सन्तोष करके रूकता नहीं, वास्तव में वह दार्शनिक है। उनके ही शब्दों में– ''पदार्थों के सनातन स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन है।''

अरस्तु के अनुसार– ''दर्शन एक ऐसा विज्ञान है जो परम तत्व के यथार्थ स्वरूप की जॉच करता है।''

कान्ट के अनुसार–''दर्शन बोध क्रिया का विज्ञान और उसकी आलोचना है।''

परन्तु आधुनिक युग में पश्चिमी दर्शन में भारी बदलाव आया है, अब वह मूल तत्व की खोज से ज्ञान की विभिन्न शाखाओं की तार्किक विवेचना की ओर प्रवृत्त है। अब दर्शन को विज्ञानों का विज्ञान और आलोचना का विज्ञान माना जाता है। कामटे के शब्दों में– ''दर्शन विज्ञानों का विज्ञान है।''

और हरबार्ट स्पेन्सर के शब्दो में ''दर्शन विज्ञानों का समन्वय या विश्व व्यापक विज्ञान है।''

1.3.3 दर्शन का वास्तविक सम्प्रत्यय

ऊपर की गयी चर्चा से यह स्पष्ट है कि भारतीय दषष्टिकोण और पाश्चात्य दषष्टिकोण में मूलभूत अन्तर है। परन्तु दर्शन की मूलभूत सर्वसम्मत परिभाषा होनी चाहिये–

दर्शन ज्ञान की वह शाखा है, जिसमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एवं मानव के वास्तविक स्वरूप सृष्टि–सृष्टा, आत्मा–परमात्मा, जीव–जगत, ज्ञान–अज्ञान, ज्ञान प्राप्त करने के साधन और मनुष्य के करणीय और अकरणीय कर्मों का तार्किक विवेचन किया जाता है।

इस परिभाषा में प्राकषतिक, सामाजिक, अनात्मवादी व आत्मवादी और सभी दर्शन आ जाते है, और दर्शन के निम्न अर्थ प्रतिबिम्बित होते हैं–

1. **दर्शन का मूल ज्ञान के लिये प्रेम–** दर्शन शब्द के लिये अंग्रेजी शब्द फिलॉसफी है। इस शब्द की उत्पत्ति दो यूनानी शब्द से हुयी है। फिलॉस जिसका अर्थ है– प्रेम तथा सोफिया जिसका अर्थ है आफ विज्डम। इस प्रकार से फिलास्फी का अर्थ है 'लव फार विज्डम'या ज्ञान के लिये प्रेम। सुकरात के अनुसार ''वे व्यक्ति दार्शनिक होते हैं जो सत्य के दर्शन हेतु इच्छुक होते हैं।''
2. **दर्शन का अर्थ सत्य की खोज–** दूसरी ओर प्रथम परिभाषा भी यह स्पष्ट करती है कि दर्शन जीवन के सत्यों की खोज और उसे जानने की इच्छा तथा उसके साक्षात्कार को कहते हैं। डी0वी0ने स्पष्ट लिया है'' दर्शन विचारने का प्रयत्न है। हम यह भी कह सकते हैं कि जीवन तथा संसार के सम्बंध में विभिन्न तथ्यों को एक साथ एकत्र करना जो एकनिष्ठ सम्पूर्ण बनकर जो या तो एकता में हो या द्वितत्ववादी सम्प्रदाय में हों, अन्तिम सिद्धान्तों की एक छोटी संख्या में बहुवितरणों को बदल दे।
3. **विचारीकरण की कला– पैट्रिक के अनुसार–** ''दर्शन को हम सम्यक्, विचारीकरण की कला कह सकते हैं।'' इसमें व्यक्ति तर्क एवं विधिपूर्वक संसार की वस्तुओं के वास्तविक रूप को जानने का प्रयास करता है। इस प्रकार से

हम यह भी मान सकते हैं कि व्यक्ति जन्म से कुछ दार्शनिक होता है।

4. **अनुभव की बोध गम्यता– बाइटमैन के अनुसार–** '' दर्शन को हम वो प्रयास कह सकते हैं जिसके द्वारा सम्पूर्ण मानव अनुभवों के विषय में सत्यता के साथ विचार करते हैं अथवा हमारे सम्पूर्ण अनुभव बोधगम्य बनते हैं।''

5. **जीवन की आलोचना –** दर्शन में जगत के दिग्दर्शन का बुद्धिवादी प्रयत्न किया जाता है। इसमें प्रयत्न किया जाता है कि तत्वों एवं पहलुओं के साथ समग्र ब्रह्माण्ड की धारणा पर पहुॅच सके तथा पारस्परिक सम्बंध समझ सकें।– दर्शन जीवन की आलोचना है।

6. **अंतिम उत्तर के रूप में –** दर्शन को उस उत्तर के रूप में देखा जा सकता है जिसमें अंतिम प्रश्नों का आलोचनात्मक ढंग से उत्तर दिया जाता है। वास्तव में दर्शन का अध्ययन केवल प्रश्नों के उत्तर के लिये नहीं अपितु प्रश्नों के लिये भी होता हैं।

6. **समस्याओं पर विचार करने का ढंग–** नवीनतम विचार के अनुसार दर्शन केवल गूढ़ एवं सूक्ष्म विचार ही नहीं वरन् यह समस्याओं पर विचार करने का ढंग है। इसके फलस्वरूप ज्ञान आदर्श मूल्य एवं अच्छाई मिलती है। हैण्डरसन लिखते हैं– ''दर्शन कुछ अत्यन्त कठिन समस्याओं का कठोर, नियंत्रित एवं सुरक्षित विश्लेषण है, जिसका सामना मनुष्य सर्वदा करता है।''

निष्कर्ष–

केवल ईश्वर ब्रह्म, जीव, प्रकृति, मनुष्य इसकी यर्थाथता एवं अंतिम वास्तविकता आदि से सम्बंधित प्रश्नों तथा उत्तरों को ही दर्शन की परिधि में नहीं रखते। व्यापक अर्थ में दर्शन वस्तुओं, प्रकषति तथा मनुष्य उसके उद्गम और लक्ष्य के प्रतिवीक्षण का एक तरीका है, जीवन के विषय में एक शक्तिशाली विश्वास है जो उसको धारण करने वाले अन्य से अलग करता है।

दर्शन की परिभाषा –

हम यह कह सकते हैं कि दर्शन का सम्बधं ज्ञान से है और दर्शन ज्ञान को व्यक्त करता है। हम दर्शन के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने हेतु कुछ परिभाषायें दे रहे हैं।

- **बरट्रेण्ड रसेल– ''**अन्य विधाओं के समान दर्शन का मुख्य उद्देश्य–ज्ञान की प्राप्ति है।''
- **आर0 डब्लू सेलर्स–**''दर्शन एक व्यवस्थित विचार द्वारा विश्व और मनुष्य की प्रकषति के विषय में ज्ञान प्राप्त करने का निरन्तर प्रयत्न है।''
- **जॉन डी0वी0 का कहना है–** ''जब कभी दर्शन पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया है तो यही निश्चय हुआ कि दर्शन ज्ञान प्राप्ति का महत्व प्रकट

करता है जो ज्ञान जीवन के आचरण को प्रभावित करता है।''

- **हैन्डर्सन के अनुसार–** ''दर्शन कुछ अत्यन्त कठिन समस्याओं का कठोर नियंत्रित तथा सुरक्षित विश्लेषण है जिसका सामना मनुष्य करता है।
- **ब्राइटमैन** ने दर्शन को थोड़े विस्तष्त रूप में परिभाषित किया है – कि दर्शन की परिभाषा एक ऐसे प्रयत्न के रूप में दी जाती है जिसके द्वारा सम्पूण्र मानव अनुभूतियों के विषय में सत्यता से विचार किया जाता है अथवा जिसके द्वारा हम अपने अनुभवों द्वारा अपनें अनुभवों का वास्तविक सार जानते हैं।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजियें।

1. दर्शन का अंग्रेजी रूप किस यूनानी शब्द से लिया गया है?

   ....

2. दर्शन के मुख्य रूप से दो अर्थ बताइये।

   ....

3. दर्शन की कोई दो परिभाषा लिखिये।

   ....

1.4 दर्शन की आवश्यकता

दर्शन यानी दाशर्निक चिन्तन की बुनियाद, उन बुनियादी प्रश्नों में खोजी जा सकती है, जिसमें जगत की उत्पत्ति के साथ–साथ जीने की उत्कंठा की सार्थकता के तत्वों को ढूढने का प्रश्न छिपा है। प्रकृति के रहस्यों को ढूढनें से शुरू होकर यह चिन्तन उसके मनुष्य धारा के सामाजिक होने की इच्छा या लक्ष्य की सार्थकता को अपना केन्द्र बिन्दु बनाती है। मनुष्य विभिन्न प्रकार के ज्ञान अपने जीवन में प्राप्त करता है। उस ज्ञान का कुछ न कुछ लक्ष्य अवश्य होता है। दर्शनशास्त्र के अध्ययन शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थियों के लिये विशेष कर आवश्यक जान पड़ता है। इसके कई कारण है–

1. **जीवन को उपयोगी बनाने के दृष्टिकोण से–** भारतीय एवं पाश्चात्य दोनो विचारों के अनुसार दर्शन की आवश्यकता सर्वप्रथम जीवन के लिये होती है। प्रत्येक व्यक्ति विद्वान या साधारण ज्ञान या न जानने वाला हो वह अवश्य ही विचार करता है। व्यक्ति अपने जीवन की घटनाओं को यादकर उनसे आगामी घटनाओं का लाभ उठाता है। यह अनुभव उसको जीवन में एक विशिष्ट दषष्टिकोण रखने वाला बना देते हैं। यही उसका जीवन दर्शन बन जाता है।

2. **अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण–** दर्शन का एक रूप हमें अर्थव्यवस्था में भी मिलता है, जिसके आर्थिक दर्शन भी कहते हैं। आर्थिक क्रियाओं पर एक प्रकार का नियंत्रण होता है। इसका प्रयोग व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय जीवन में होता है। परिणामस्वरूप दोनों को लाभ होता है। मितव्ययिता एक विचार है और इसका उदाहरण है। व्यक्तिगत एंव राष्ट्रीय योजना का आधार यही दर्शन होता है। अर्थव्यवस्था शिक्षा के क्षेत्र में भी होता है। जिससे लाभों की दृष्टि में रखकर योजनायें बनती हैं।

3. **राजनैतिक व्यवस्था के दृष्टिकोण से–** विभिन्न राजनैतिक व्यवस्था में विभिन्न प्रकार के दर्शन होते हैं। जनतंत्र में जनतांत्रिक दर्शन होता है। जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार मिलते हैं। विभिन्न ढंग से उसे समान अवसर दिये जाते हैं और उसे पूर्ण स्वतंत्रता मिलती है। विभिन्न ढंग से एक दार्शनिक दृष्टिकोण एवं सिद्धान्त बनता है। दर्शन राष्ट्रीय मूल्यों का स्थापन कर उनका क्रमिक विकास करता है।

4. **शैक्षिक विकास की दृष्टिकोण से–** संस्कृति जीने की कला है एवं तरीकों का योग हैं । दर्शन इन विधियों का परिणाम कहा जा सकता है। संस्कृति का परिचय दर्शन से मिलता है। भारतीय संस्कृति का ज्ञान उसके दर्शन से होता है। भारतीय परम्परा में सुखवाद को स्थान नहीं, त्याग एवं तपस्या का स्थान सर्वोपरि है अतएव भारतीय दर्शन में योगवादी आदर्श पाये जाते हैं और भारतीय दर्शन आदर्शवादी है।

5. **व्यक्ति को चिन्तन एवं तर्क से पूर्ण बनाने की दृष्टि से –** दर्शन जीवन पर, जीवन की समस्याओं पर और इनके समाधान पर चिन्तन एवं तर्क की कला है। इससे जानने की आवश्यकता हर व्यक्ति को हो।

बोध प्रश्न

निर्देश–

क– निचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से मिलान करें।

दर्शन के कोई चार महत्व बताइये–

1. ....

2. ....

3. ....

4. ....

1.5 दर्शन का विषय क्षेत्र

भारतीय विचारधारा के अनुसार दर्शन एवं जीवन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है। अतः सम्पूर्ण जीवन को दर्शन का विषय क्षेत्र माना गया है। हम दर्शन को मुख्यतः दो रूप में ग्रहण करते हैं–

1. सूक्ष्म तात्विक ज्ञान के रूप में।
2. जीवन की आलोचना और जीवन की क्रियाओं की व्याख्या के रूप में। एक शास्त्र के रूप में दर्शन के अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों को अध्ययन किया जाता है।

1. **आत्मा सम्बंधी तत्व ज्ञान–** इसमें आत्मा से सम्बंधित प्रश्नों पर विचार किया जाता हैः यथा आत्मा क्या है? आत्मा का स्वरूप क्या है? जीव क्या है? आत्मा का शरीर से क्या सम्बंध है? इत्यादि।
2. **ईश्वर सम्बंधी तत्व ज्ञान–** इसमें ईश्वर विषयक प्रश्नों के उत्तर खोजे जाते हैं : जैसे कि ईश्वर क्या है? उसका अस्तित्व है या नहीं? ईश्वर का स्वरूप कैसा है? इत्यादि।
3. **सत्ता–शास्त्र–** इसमें अमूर्त सत्ता अथवा वस्तुओं के तत्व के स्वरूप का अध्ययन किया जाता हैः यथा– ब्रह्माण्ड के नश्वर तत्व क्या है? ब्रह्माण्ड के अक्षर तत्व कौन–कौन से हैं ?
4. **सृष्टि–शास्त्र–** इसमें सृष्टि की रचना एवं विकास से सम्बंधित समस्याओं पर विचार किया जाता है : यथा– क्या सृष्टि अथवा ब्रह्माण्ड की रचना भौतिक तत्वों से हुयी है? क्या ब्रह्माण्ड का निर्माण आध्यात्मिक तत्वों से हुआ है? इत्यादि।
5. **सषष्टि उत्पत्ति का शास्त्र–** इस शास्त्र में सृष्टि की उत्पत्ति के विषय में विचार किया जाता है : यथा– सृष्टि अथवा विश्व की उत्पत्ति किस प्रकार हुयी है? क्या इसकी रचना की गयी है? यदि हां तो इसकी रचना किसने की है? इत्यादि।
6. **ज्ञान–शास्त्र–** इस शास्त्र में सत्य ज्ञान से सम्बंधित समस्याओं का हल खोजा जाता है : जैसे कि सत्य ज्ञान क्या है? इस ज्ञान को प्राप्त करने के कौन– से साधन है? क्या मानव बुद्धि इस ज्ञान को प्राप्त कर सकती है? इत्यादि।
7. **नीति–शास्त्र–** इसमें व्यक्ति के शुद्ध एवं अशुद्ध आचरण से सम्बंध रखने वाली बातों का अध्ययन किया जाता है। जैसे नीति क्या है? मनुष्य को कैसा आचरण करना चाहिये। मनुष्य का कौन सा आचरण नीति विरुद्ध है।

8. **तर्क–शास्त्र–** इसमें तार्किक चिन्तन के विषय में विचार किया जाता है– यथा : तार्किक चिन्तन कैसे किया जाता है? तर्क की विधि क्या है? तार्किक चिन्तन का स्वरूप क्या है? इत्यादि।

9. **सौन्दर्य–शास्त्र–** इसमें सौन्दर्य– विषयक प्रश्नों के उत्तर खोजे जाते हैं : यथा– सौन्दर्य क्या होता है? सौन्दर्य का मापदण्ड क्या है? इत्यादि।

10. **दर्शन मनुष्य एवं जगत के सम्बंध का अध्ययन–** दर्शन जीवन की आलोचना तथा जीवन क्रियाओं की व्याख्या है वहां दर्शन मनुष्य का सम्बंध जगत से तथा जगत की विविध गतिविधियों से क्या है, अध्ययन करता है। जीवन का इस जगत से सम्बंध समाज और समाज की आर्थिक, राजनैतिक शैक्षिक आदि क्रियाओं के साथ है। अस्तु सामाजिक दर्शन, आर्थिक दर्शन, राजनैतिक दर्शन तथा शिक्षा दर्शन भी अध्ययन के विषय बन गये हैं। इन सभी विषयों में समस्याओं के अध्ययन के साथ उनमें आदर्श एवं मूल्यों की स्थापना होती है।

बोध प्रश्न

निर्देश–

क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से मिलान करें।

5. भारतीय विचारधारा के अनुसार दर्शन का क्षेत्र क्या है?

....

6. सषष्टि शास्त्र किसका अध्ययन करता है?

....

7. दर्शन मानव जीवन से कैसे सम्बंधित है?

....

1.6 दर्शन का उद्देश्य

दर्शन चिन्तन एवं विचार है, जीवन के रहस्यों को जानने का प्रयत्न है। अतएव दर्शन के निम्न उद्देश्य कहे जा सकते हैं।

- **रहस्यात्मक आश्चर्य की सन्तुष्टि–** दर्शन का आरम्भ भारत में तथा यूनान में आश्चर्य सें हुआ है। वैदिक काल में मानव ने प्रकृति की सुन्दर वस्तुओं, घटनाओं एवं क्रियाओं को देखकर आश्चर्य किया कि सूर्य, चन्द्र, तारे, प्रकाश, आंधी, वर्षा, गर्मी और मानव की उत्पत्ति कैसे हुयी? मानव में इसे जानने की इच्छा हुयी। उसने परम सत्ता की कल्पना की। उसने अपने (आत्म) एवं ईश्वर

(परम) में अन्तर किया और दोनों के पारस्परिक सम्बंध को खोजने के लिये प्रयत्नशील हुआ। मानव ने परमसत्ता को समस्त चराचर में समाविष्ट देखा और चिन्तन द्वारा अनुभूति या साक्षात्कार करने की मानव ने लगातार प्रयत्न किया और उस परमसत्ता की प्राप्ति को मोक्ष कहा यही परमसत्ता की प्राप्ति भारतीय दर्शन कहलाया।

- **तात्विक रहस्यों पर चिन्तन–** यूनान में ''आश्चर्य'' से दर्शन का जन्म माना गया है। यूनानी लोगों को भी प्रकृति की क्रियाओं पर आश्चर्य हुआ और संसार के मूलोद्गम को जानने की जिज्ञासा ने जन्म लिया। थेलीज ने जल को एनैकथीमैन्डर ने वायु और हैराक्लाइटस ने अग्नि को उद्गम का मूल माना। वास्तव में ये तीन तत्व ही जगत निर्माण के मूल माने गये। यही तत्व भारत में भी सृष्टि निर्माण के मूल तत्व माने गये हैं बस पांचवा तत्व आकाश माना गया है।
- **तर्क द्वारा संशय दूर करना–** दर्शन का आरम्भी संशय से होता है। वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति केवल किसी की बात को मान लेने से नहीं होता है जब तक कि इसे तर्क देकर सिद्ध न किया जाये। डेकार्टे ने माना– ''मैं विचार करता हूँ इस लिये मेरा अस्तित्व है'' अर्थात् डेकार्टे ने आत्मा को सन्देह रहित माना। आत्मा मनुष्य में निहीत है परन्तु ईश्वर की सत्ता असंदिग्ध हैं। दर्शन सत्य ज्ञान प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।
- **यर्थाथ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना–** भारतीय दृष्टिकोण से दर्शन का लक्ष्य सत्य की खोज करना है। यह सत्य प्रकृति सम्बंधी तथा आत्मा सम्बंधी हो सकता है। इस यूनान के दार्शनिक प्लेटो ने माना और उनके अनुसार–दर्शन, अनन्त का तथा वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना है। अरस्तु ने और अधिक स्पष्ट करते हुये लिखा कि दर्शन का लक्ष्य प्राणी के स्वरूप का अन्वेषण करना है और उनमें निहित स्वाभाविक गुणों का पता लगाता है। वून्ट ने स्पष्ट किया– विद्वानों द्वारा प्राप्त समग्र ज्ञान का सामंजस्यपूर्ण एकता में एकत्रीकरण ही दर्शन है। अतएव ''दर्शन पूर्ण रूपेण एकत्रित ज्ञान ही है।'' दर्शन का लक्ष्य समग्र ब्रह्माण्ड को समग्र वास्तविकता का दिग्दर्शन है।
- **जीवन की आलोचना और व्याख्या करना–** दर्शन का एक लक्ष्य आधुनिक वर्षों मे ंजीवन की आलोचना एवं व्याख्या करना तथा निश्चित धारणाओं को प्राप्त कराना है जिससे जीवन को लाभ हो सके। दर्शन का उद्देश्य व्यापक तथा विभिन्न क्षेत्रों से सम्बंधित है।
- **जीवन के आदर्शों का निर्माण करना–** प्राचीन काल से आज तक अपने देश में तथा अन्य सभी देशों में दर्शन का लक्ष्यों जीवन के आदर्शों का निर्माण करना रहा है। दर्शन जीवन के प्रति उस निर्णय को कहते है जो मानव करता

है। अतः आदर्श निर्माण दर्शन का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य होता है।

बोध प्रश्न

निर्देश–

क– निचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से मिलान करें।

8. दर्शन के चार प्रमुख उद्देश्य लिखिये।

....

....

1.7 दार्शनिक दृष्टिकोण की विशेषताये

दर्शन– प्रकषति, व्यक्तियों और वस्तुओं तथा उनके लक्ष्यों और उद्देश्यों के बारे में निरन्तर विचार करता है। ईश्वर, ब्रह्माण्ड और आत्मा के रहस्यों और इनके पारस्परिक सम्बाधों पर प्रकाश डालता है। जो व्यक्ति इनसे सम्बंधित प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करता है उसे हम दार्शनिक कहते हैं। रॉस ने लिखा है कि– वे सब लोग जो सत्यता एवं साहस से उपर्युक्त प्रश्नों का कोई उत्तर देने का प्रयत्न करते हैं और जिन उत्तरों में कुछ सुसंगति तथा तर्कबद्धता होती है उनका दृष्टिकोण दार्शनिक होता है– चाहे वे भौतिकवादी धर्मशास्त्री या अज्ञेयवादी हो।'' दार्शनिक दृष्टिकोण की अग्रलिखित विशेषताएं है–

- **विस्मय की भावना**– दार्शनिक वह व्यक्ति होता है, जो अपने चारों ओर की प्राकषतिक एवं सांसारिक व्यवस्था एवं घटनाओं को देखकर आश्चर्य प्रकट करता है और मूल कारण की खोज करने लगता है।
- **सन्देह**– दार्शनिक प्रत्येक बात की ठोस प्रमाणों की खोज कर उसमें फंसने का प्रयास करता है और प्रत्येक बात को सन्दोहस्पद दृष्टि से देखता है।
- **मीमांसा**– दार्शनिक किसी भी बात को ज्यों का त्यों नहीं स्वीकार करता है, वरन् उसकी मीमांसा करके ही उसको मान्यता देता है।
- **चिन्तन**– मीमांसा के लिये चिन्तन की आवश्यकता होती है और दार्शनिक चिन्तनशील होता है।
- **तटस्थता–** दार्शनिक अन्धविश्वासी नहीं होता। वह तटस्थ भाव से किसी भी प्रश्न पर चिन्तन करता है। उसमें विचार स्वातंत्र्य होता है। वह स्वयं अपने मत का निर्धारण करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी

क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर मिलान करें।

9. दार्शनिक में क्या गुण होते है?

....

10. दार्शनिक दृष्टिकोण की कोई तीन विशेषताओं को बताओं?

....

1.8 सारांश

इस इकाई में दर्शन की अवधारणा, अर्थ, महत्व एवं विषय क्षेत्र को सपष्ट करने की चेष्टा की गयी है। दर्शन का मानव जीवन में उपयोगिता पर भी प्रकाश डाला गया है। इस इकाई में दर्शन के विषय क्षेत्र की भी चर्चा के साथ दर्शन के उद्देश्यों को भी प्रतिबिम्बित किया गया। इसके अन्त में दार्शनिक दृष्टिकोण की विशेषतायें भी बतायी गयी हैं। सारांश में यह कहा जा सकता है कि दर्शन हमारी भावनाओं तथा मनोदशाओं को प्रतिबिम्बित करता है और ये भावनायें हमारे कार्यों को नियंत्रित करती हैं। दर्शन हमारे जीवन और शिक्षा दोनों को मार्गदर्शन देता है। दर्शन मनुष्य के चिन्तन की उच्चतम सीमा है। इसमें सम्पूर्ण ब्राह्माण्ड एवं मानव जीवन के वास्तविक स्वरूप, सृष्टि–सृष्टा, आत्मा, परमात्मा, जीव जगत, ज्ञान–अज्ञान, ज्ञान प्राप्त करने के साधन और मनुष्य के करणीय और अकरणीय कर्मों का तार्किक विवेचन किया जाता है। जिसे देखा जाये अर्थात् सत्य के दर्शन किये जाये, वह दर्शन है। अन्तिम सत्य की खोज में हमें ब्राह्माण्ड के स्वरूप एवं इसके कर्ता तथा उपादान कारण पर बरबस विचार करना पड़ा। दार्शनिकों ने सबसे अधिक विचार किया मनुष्य के स्वयं के वास्तविक स्वरूप पर और उस सन्दर्भ में आत्मा परमात्मा, जीव जगत, ज्ञान–अज्ञान प्राप्त करने के साधन पर खूब विचार किया गया यही दर्शनशास्त्र का विषय सामग्री बना।

1.9 अभ्यास कार्य

1. दर्शन की भारतीय एवं पाश्चात्य सम्प्रत्यय को स्पष्ट करते हुये महत्व एंव उद्देश्य पर प्रकाश डालिये।

1.10. चर्चा के बिन्दु

हमने भाग 1.4 में देखा है कि दर्शन की आवश्यकता मानव के सम्पूर्ण जीवन के सभी पक्षों को विकसित करने हेतु होती है। क्या हर मनुष्य दार्शनिक होता है, और मनुष्य दार्शनिक कब कहलाता है। अगर दार्शनिक दृष्टिकोण हो जाता है तो उसमें क्या–क्या गुण उत्पन्न हो जाते हैं। क्या दार्शनिक जीवन के उतार–चढ़ाव से विचलित होता है? अगर नहीं ? तो क्यों?

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर–

1. दो यूनानी शब्द फिलॉस एवं सोफिया।

2. अ– यथार्थ तत्व की अनुभूति।

ब–वास्तविकता के स्वरूप का तार्किक विवेचन।

3. कामटे के अनुसार– दर्शन विज्ञानों का विज्ञान है।

उपनिषद् के अनुसार– जिसे देखा जाये अर्थात् सत्य के दर्शन किये जाये वही दर्शन है।

4. अ. दर्शन मानव जीवन को उपयोगी बनाने हेतु।

ब. अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय जीवन हेतु।

स. राजनैतिक दृष्टिकोण एंव व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने हेतु।

द. शैक्षिक विकास के लिये।

5 भारतीय विचारधारा के अनुसार सम्पूर्ण जीवन ही दर्शन का विषय क्षेत्र है।

6 सषष्टि की उत्पत्ति एवं विकास से सम्बंधित तथ्यों को अध्ययन।

7 दर्शन जीवन की आलोचना एवं जीवन की क्रियाओं की व्याख्या करता है। दर्शन मनुष्य का सम्बंध जगत से तथा जगत की विविध गतिविधियों का अध्ययन करता है।

8 अ. रहस्यात्मक आश्चर्य की सन्तुष्टि।

ब. तात्विक रहस्यों पर चिन्तन की योग्यता देना।

स. तर्क द्वारा संशय दूर करना।

द. यथार्थ स्वरूप का ज्ञान देना।

9. विस्मय रखने वाला, संदेह करने वाला, चिन्तनशील और विचारों पर तटस्थ, साहसी।

10. अ. विस्मय की भावना

ब. संदेह

स. मीमांसा

1.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Curtis S.J. (1958) : *Introduction to the Philosophy of education* London University, Tutorial Press 1958

Henderson S.P. (1947) : *Introduction of Philosophy of educaton*, Chicago: University of Chicago.

Kilpatrik G.F. (1966) : *Philosophy of education,* New York, Macmillan and Co.

Brubacher J.S. (1982) : *Electic Philosophy of education*, Englwood Cliffs, Prentice Hall.

चतुर्वेदी सीताराम (1972) : *शिक्षा दर्शन, लखनऊ हिन्दी समिति, सूचना विभाग लखनऊ*

इकाई–2 शिक्षा की अवधारणा एवं कार्य

संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 शिक्षा का सम्प्रत्यय और परिभाषायें
2.4 शिक्षा का व्यापक एवं संकुचित अर्थ
2.5 शिक्षा की प्रक्रिया
2.6 शिक्षा के घटक
2.7 शिक्षा के रूप
2.8 प्रौढ़ शिक्षा–खुली शिक्षा, दूर शिक्षा एवं जीवन पर्यन्त शिक्षा
2.9 सामान्य, विशिष्ट शिक्षा और सकारात्मक एवं नकारात्मक शिक्षा
2.10 शिक्षा के अभिकरण
2.11 शिक्षा के कार्य–मानव जीवन के सन्दर्भ में
2.12 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य
2.13 सारांश
2.14 अभ्यास कार्य
2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.16 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

शिक्षा मानव विकास का मूल साधन है। शिक्षा समाज की आधारशिला है। समाज में जिस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था होगी उसी प्रकार के समाज का निर्माण होगा। शिक्षा की अवधारणा, स्वरूप एवं कार्य व्यापक है। शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थी के लिये यह अति आवश्यक है कि वह जाने कि शिक्षा का सम्प्रत्यय क्या है? इस इकाई में शिक्षा के संकुचित एवं व्यापक अर्थ को भी उजागर किया है। इसके साथ आपको शिक्षा की प्रक्रिया घटक एवं विविध रूप को भी समझाने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त शिक्षा के अभिकरण और विविध कार्यों को भी सरलतम तरीके से प्रस्तुत किया है। इस इकाई से शिक्षाशास्त्र विषय में विस्तष्त जानकारी के लिये नींव पड़ेगी क्योंकि शिक्षा की संकल्पना के ज्ञान के बिना आगे समझना कठिन ही नहीं दुरूह होगा।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो जायेंगे–

- शिक्षा के अर्थ को विभिन्न दार्शनिक, सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक दषष्टिकोण के अनुसार बता सकेंगे।
- शिक्षा की कुछ परिभाषायें बता सकेंगे।
- शिक्षा की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।
- शिक्षा के विविध अंग एवं रूप का विश्लेषण कर सकेंगे।
- शिक्षा के विविध रूपों के मध्य अन्तर कर सकेंगे।
- शिक्षा के अभिकरणों को वर्णित कर सकेंगे।
- मानव जीवन एवं राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्यों की सूची बनाकर क्रमबद्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

2.3 शिक्षा की अवधारणा

अमरकोश में शिक्षा शब्द का प्रयोग षड्–वेदागों में से एक वेदांग के लिये प्रयुक्त हुआ है। उस समय शिक्षाशास्त्र का प्रयोजन वेदों की ऋचाओं का शुद्ध उच्चारण सिखाना था।

शिक्षेत्यादि श्रुतेरंगमोंकारप्रणवौ समौ।

इतिहास पुरावष्त्तमष्दात्ताद्यास्त्रयः स्वरा।।

कदाचित उस युग में वेदों का पठन–पाठन ही शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य रहा होगा, अतः 'शिक्षा' शब्द स्वरशास्त्र के लिये रूढ़ बन गया। यदि शब्द की उत्पत्ति की दृष्टि से देखा जाये तो शिक्षा शब्द का उद्गम संस्कृत की 'शिक्ष्' धातु से है। शिक्षा का अर्थ है ''सीखना''। रंघुवंश में शिक्षा शब्द का दो अर्थ सीखना और सिखाना लिया गया है।

भारतीय भाषाओं में शिक्षा के पर्यायवाची के रूप में विद्या तथा ज्ञान शब्दों को भी प्रयोग किया जाता है। विद्या शब्द का उद्गम भी ''विद्'' धातु से हुआ है, जिसका अर्थ होता है ''जानना'' पता लगाना' अथवा 'सीखना'। बाद में 'विद्या' शब्द पाठ्यक्रम के रूप में रूढ़ हो गया है। आरम्भ में विद्या के अन्तर्गत चार विषयो का समावेश किया गया, कुछ समय पश्चात् मनु ने ''आत्मविद्या'' नामक पंचम विधा का एक प्रकार भी जोड़ा और शनैः शनैः विद्याओं की संख्या चौदह हो गयी, जिसमें वेदांग,वेद, धर्म, न्याय, मीमांसा आदि समावेशित हुये, परन्तु मूलतः विद्या शब्द का अर्थ ज्ञातव्य के रूप में प्रचलित रहा।

भारतीय दर्शन में ज्ञान शब्द वही अर्थ रखता है जो कि व्यापक अर्थों में ''शिक्षा'' का होता है। अमरकोश में ज्ञान अथवा विज्ञान शब्दों का अन्तर स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि ज्ञान का विषय मुक्ति है, जबकि विज्ञान का शिल्प और विविध शास्त्र। दूसरे शब्दों में ज्ञान वह है जो मनुष्य को उन्नत करता है एवं मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता

है। हमने शिक्षा को अपने दृष्टिकोण से देखा–परखा और परिभाषित किया है।

1. शिक्षा का शाब्दिक अर्थ – शिक्षा के लिये प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द एजूकेशन पर विचार करें तो भी

उसका यही अर्थ निकलता है। ''एजूकेशन'' शब्द की उत्पत्ति लेटिन भाषा के तीन शब्दों से मानी गयी है।

- एजुकेटम – इसका अर्थ है– शिक्षण की क्रिया
- एजुकेयर – शिक्षा देना– ऊपर उठाना, उठाना
- एजुसियर – आगे बढ़ना

सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि शिक्षा का अर्थ है– प्रशिक्षण, संवर्द्धन और पथ–प्रदर्शन करने का कार्य। इस प्रकार एजुकेशन का सर्वमान्य अर्थ हुआ बालक की जन्मजात शक्तियों या गुणों को विकसित करके उसका सर्वांगीण विकास करना।

इस शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप की व्याख्या करने में मूल भूमिका दार्शनिक, समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों और वैज्ञानिकों ने अदा की है। सभी ने शिक्षा को अपने–अपने दषष्टिकोणों से देखा–परखा और परिभाषित किया है।

2. शिक्षा का दार्शनिक सम्प्रत्यय – दर्शन का विचार केन्द्र मनुष्य होता है। मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य की प्राप्ति का साधन मार्ग निश्चित करने में दार्शनिकों की रूचि होती है। मानव जीवन के अन्तिम उद्देश्य के सम्बंध में दार्शनिकों के भिन्न मत हैं, अतः इसका प्रभाव उनके द्वारा दी गयी परिभाषाओं में स्पष्ट झलकता है।

- ❖ जगतगुरू शंकराचार्य की दृष्टि में –सः विद्या या विमुक्तये।
- ❖ भारतीय मनीषी स्वामी विवेकानन्द के अनुसार – शिक्षा के द्वारा मनुष्य को अपने पूर्णता को भी अनुभूति होनी चाहिए। उनके शब्दों में– '' मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।''
- ❖ युगपुरूष महात्मा गॉधी के शब्दों में– '' शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है।''
- ❖ यूनानी दार्शनिक प्लेटो शिक्षा के द्वारा शरीर और आत्मा दोनों क विकाश के महत्व को स्वीकार करते है। उनके अनुसार – '' शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करना है, जिसके कि वे योग्य हैं।''
- ❖ प्लेटो के शिष्य अरस्तू के अनुसार – "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निर्माण ही शिक्षा है।''
- ❖ भौतिकवादी चार्वाकों की दषष्टि में–''शिक्षा वह है जो मनुष्य को सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने के योग्य बनाती है।''
- ❖ हरबर्ट स्पेन्सर के अनुसार–''शिक्षा का अर्थ अन्तः शक्तियों का बाह्य जीवन

से समन्वय स्थापित करना है।''

3. **शिक्षा का समाजशास्त्रीय सम्प्रत्यय–** समाज शास्त्रियों का विचार केन्द्र समाज होता है और वे शिक्षा को व्यक्ति एवं समाज के विकास का साधन मानते हैं। उन्होनें शिक्षा प्रक्रिया की प्रकृति के विषय में निम्न तथ्य उजागर किये–

❖ **शिक्षा एक समाजिक प्रक्रिया है–** समाजशास्त्रियों के अनुसार जब दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच सामाजिक अन्तः क्रिया होती है तो वे एक दूसरे की भाषा, विचार, आचरण से प्रभावित होते हैं, यही सीखना है और जब कुछ कार्य निश्चित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है तो वह शिक्षा कहलाती है। समाजशास्त्रियों ने स्पष्ट किया कि शिक्षा समाज के उद्देश्यों एंव लक्ष्यों को प्राप्ति का साधन है जैसा समाज होता है वैसी उसकी शिक्षा होती है।

❖ **शिक्षा एक अनवरत प्रक्रिया है –** समाजशास्त्रियों का दूसरा तथ्य यह है कि शिक्षा समाज में सदैव चलती है। जन्म से प्रारम्भ होकर अन्त तक चलती रहती है। शिक्षा पीढ़ी दर पीढ़ी चलती है। निरन्तरता उसका दूसरा लक्षण है। जे0एस0 मेकजी के अनुसार– ''शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है, जो आजीवन चलती रहती है, और जीवन के प्रायः प्रत्येक अनुभव से उसके भण्डार में वृद्धि होती है।'' प्रो0 डमविल के अनुसार– ''शिक्षा के व्यापक अर्थ में वे सभी प्रभाव आते हैं जो व्यक्ति को जन्म से लेकर मृत्यु तक प्रभावित करते हैं।''

❖ **शिक्षा एक द्वि–ध्रुवीय प्रक्रिया है–** समाजशास्त्रियों ने स्पष्ट किया है कि शिक्षा की प्रक्रिया में एक पक्ष प्रभावित करता है और दूसरा पक्ष प्रभावित होता है। शिक्षा के दो ध्रुव होते हैं– एक वह जो प्रभावित करता है (शिक्षक) और दूसरा वह जो प्रभावित होता है (शिक्षार्थी)। जान डी0वी0 ने शिक्षा के दो ध्रुव माने है– एक मनोवैज्ञानिक और दूसरा सामाजिक। मनोवैज्ञानिक अंग से उनका तात्पर्य सीखने वाले की रूचि, रूझान और शक्ति से है और सामाजिक अंग से उनका तात्पर्य उनके सामाजिक पर्यावरण से है।

❖ **शिक्षा विकास की प्रक्रिया है–** मनुष्य की शिक्षा उसे केवल परिस्थितियों के साथ सामन्जस्य करना ही नही सिखाती है वरन् उसे सामाजिक परिवर्तन करने और परिवर्तनों को स्वीकारने के लिये तैयार करती है। इस प्रकार शिक्षा के उद्देश्य पाठ्यचर्चा और शिक्षण विधियों आदि में आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहता है। डा0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने स्पष्ट कहा है कि– ''शिक्षा को मनुष्य और समाज दोनों का निर्माण करना चाहिये।''

❖ **शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है–** शिक्षा वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी सभ्यता एवं संस्कषति में निरन्तर विकास करता है। इस विकास के लिये उसकी एक पीढ़ी अपने ज्ञान, कला, कौशल को दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित

करती है। इस हस्तान्तरण को प्रत्येक समाज विद्यालयी शिक्षा में समाहित करता है। अगर शिक्षा गतिशील न होती तो हम विकास न कर पाते। पाश्चात्य जगत के प्रसिद्ध समाजशास्त्री ओटवे महोदय ने शिक्षा के स्वरूप एवं कार्य दोनों को समाहित करते हुये स्पष्ट कहा है कि– ''शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया व्यष्टियों एवं सामाजिक समूहों के बीच की अन्तःक्रिया है जो व्यष्टियों के विकास के लिये कुछ निश्चित उद्देश्यों से की जाती है।'' टी0 रेमण्ट महोदय ने शिक्षा को इस रूप में परिभाषित किया है– ''शिक्षा विकास की प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य शैशवकाल से प्रौढ़काल तक विकास करता है और जिसके द्वारा वह धीरे–धीरे अपने को अनेक प्रकार से अपने प्राकृतिक सामाजिक और आध्यात्मिक पर्यावरण के अनुकूल बनाता है।''

4. **शिक्षा का आर्थिक सम्प्रत्यय –** अर्थशास्त्रियों के विचार समाज कें आर्थिक श्रोत और आर्थिक तन्त्र होते है। शिक्षा को वे एक उत्पादक क्रिया के रूप में स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में शिक्षा उपभोग की वस्तुओं के साथ उत्पादन की भी कारक होती है। शोध ये परिणाम देते हैं कि शिक्षित मनुष्य की उत्पादन शक्ति और संगठन क्षमता अशिक्षित व्यक्ति की अपेक्षा अधिक होती है। अर्थशास्त्री शिक्षा को एक निवेश के रूप में स्वीकार करते हैं। उनकी दषष्टि से– शिक्षा वह आर्थिक निवेश है जिसके द्वारा व्यक्ति में उत्पादन एंव संगठन के कौशलों का विकास किया जाता है और इस प्रकार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जाती है और उनका आर्थिक विकास होता है।

5. **शिक्षा का मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय–** भारतीय योग मनोविज्ञान का विचार केन्द्र मनुष्य का बाह्य स्वरूप और उसका अन्तः करण दोनो होते हैं। बाह्य स्वरूप में वह उसकी कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों का अध्ययन करता है और अन्तःकरण में मन, बुद्धि, अहंकार, चित्त और आत्मा का अध्ययन करता है। उसकी दषष्टि से– शिक्षा का अर्थ है मनुष्य की बाह्य इन्द्रियों और अन्तःकरण का प्रशिक्षण। शिक्षा के द्वारा सर्वप्रथम शरीर मस्तिष्क और चित्त एवं आत्मा का विकास होना चाहिए। इस विषय में जर्मन शिक्षाशास्त्री पेस्टालॉजी का मत है कि यह विकास स्वाभाविक, सम और प्रगतिशील होना चाहिये। उनके शब्दों में– ''शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक समरस और प्रगतिशील विकास है।

   पेस्टालॉजी के शिष्य फ्रोबेल ने शिक्षा को इस रूप में परिभाषित किया है– ''शिक्षा वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा बालक अपनी आन्तरिक शक्तियों को बाहर की ओर प्रकट करता है।''

6. **शिक्षा का वैज्ञानिक सम्प्रत्यय –** वैज्ञानिकों का विषय क्षेत्र सम्पूर्ण

ब्रह्माण्ड एवं समस्त क्रियायें है। वे किसी भी वस्तु अथवा क्रिया को वस्तुनिष्ठ ढंग से देखते हैं। शिक्षा को वे मनुष्य की शक्तियोंके बाह्य जीवनानुकूल विकास के साधन रूप में स्वीकार करते है। हरबर्ट स्पेन्सर के शब्दो में– ''शिक्षा का अर्थ अन्तःशाक्तियों का बाह्य जीवन से समन्वय स्थापित करना है।''

शिक्षा की परिभाषायें

विभिन्न शिक्षाशास्त्रियों ने शिक्षा को अपने–अपने दृष्टिकोण से देखा है।

- **सुकरात–**''शिक्षा का अर्थ है– प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में अदृश्य रूप में विद्यमान संसार के सर्वमान्य विचारों को प्रकाश में लाना।''
- **एडीसन–**''अब शिक्षा मानव मस्तिष्क को प्रभावित करती है तब वह उसके प्रत्येक गुण को पूर्णता को लाकर व्यक्त करती है।''
- **फ्राबेल–** ''शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक की जन्मजात शक्तियाॅ बाहर प्रकट होती है।''
- **टी0पी0नन–**''शिक्षा व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है जिससे कि व्यक्ति अपनी पूर्ण योग्यता के अनुसार मानव जीवन को योगदान दे सके।''
- **पेस्टालॉजी–** ''शिक्षा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का स्वाभाविक सामंजस्यपूर्ण और प्रगतिशील विकास है।''
- **जेम्स–** ''शिक्षा कार्य सम्बंधी अर्जित आदतों का संगठन है, जो व्यक्ति को उसके भौतिक और सामाजिक वातावरण में उचित स्थान देती है।''
- **हार्न–**''शिक्षा शारीरिक और मानसिक रूप से विज्ञान विकसित सचेत मानव का अपने मानसिक संवेगात्मक और संकल्पित वातावरण से उत्तम सामंजस्य स्थापित करना है।''
- **ब्राउन–**''शिक्षा चैतन्य रूप में एक नियंत्रित प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन किये जाते हैं और व्यक्ति के द्वारा समूह में।''

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरो से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. 'शिक्षा' शब्द का उद्‌गम किस संस्कृत शब्द से हुआ ?

   ....

2. शिक्षा के लिये प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द का क्या अर्थ निकलता है ?

....

3. शिक्षा का दार्शनिक संप्रत्यय के अनुसार शिक्षा का कार्य क्या है?

....

4. शिक्षा की कोई दो परिभाषा लिखिये।

....

2.4 शिक्षा का व्यापक एवं संकुचित अर्थ

किसी समाज में किसी बच्चे की शिक्षा उसके परिवार, छोटे बड़े विभिन्न सामाजिक समूहों, सामुदायिक केन्द्रों और विभिन्न प्रकार के विद्यालयों में चलने वाली शिक्षा को ही शिक्षा कहते हैं। इस प्रकार शिक्षा शब्द का प्रयोग दो रूपो में होता है– एक व्यापक रूप में और दूसरा संकुचित रूप में।

शिक्षा व्यापक अर्थ में– शिक्षा अपने व्यापक अर्थ में आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति अपने जन्म से मृत्यु तक जो कुछ सीखता और अनुभव करता है वह सब शिक्षा के व्यापक अर्थ के अन्तर्गत माना जाता है। शिक्षाशास्त्री जब शिक्षा की बात करते हैं तो वे शिक्षा के इसी रूप को अपनी विचार सीमा में रखते हैं। इस सम्बंध में हम विद्वानों के विचारों को नीचे अंकित कर रहे हैं। यथा–

लाज– ''बच्चा अपने माता–पिता को, और छात्र अपने शिक्षकों को शिक्षित करता है। प्रत्येक बात, हम जो कहते, सोचते या करते हैं हमें किसी प्रकार भी दूसरे व्यक्तियों के द्वारा कहीं, सोची या की गयी बात से कम शिक्षित नहीं करती है। इस व्यापक अर्थ में जीवन शिक्षा है और शिक्षा जीवन है।''

टी0 रेमण्ट– ''शिक्षा विकास का वह क्रम है, जिससे व्यक्ति अपने को धीरे–धीरे विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल बना लेता है। जीवन ही वास्तव में शिक्षित करता है। व्यक्ति अपने व्यवसाय, पारिवारिक जीवन, मित्रता, विवाह, पितृत्व, मनोरंजन, यात्रा आदि के द्वारा शिक्षित किया जाता है।''

शिक्षा संकुचित अर्थ में– शिक्षा के सीमित अर्थ के अनुसार बालक को स्कूल में दी जाने वाली शिक्षा से है। दूसरे शब्दों में बालक को एक निश्चित योजना के अनुसार, एक निश्चित समय और निश्चित विधियों से निश्चित प्रकार का ज्ञान दिया जाता है। यह शिक्षा कुछ विशेष प्रभावों और विशेष विषयों तक ही सीमित रहती है। बालक इस शिक्षा को कुछ ही वर्षों तक प्राप्त कर सकता है इसको प्राप्त करने का मुख्य स्थान विद्यालय होता है। शिक्षा देने वाला शिक्षक कहलाता है। शिक्षा के संकुचित अर्थ की ओर अधिक स्पष्ट करने के लिये हम कुछ विद्वानों के विचारों को नीचे दे रहे हैं। यथा–

टी0रेमण्ट– ''संकुचित अर्थ में शिक्षा का प्रयोग बोलचाल की भाषा और कानून में किया जाता है। इस अर्थ में शिक्षा व्यक्ति, आत्म–विकास और वातावरण के सामान्य प्रभावों

को अपने में कोई स्थान नहीं है। इसके विपरीत यह केवल उन विशेष प्रभावों को अपने में स्थान देती है, समाज के अधिक आयु के व्यक्ति जानबूझकर और नियोजित रूप में अपने से छोटों पर डालते हैं भले ही ये प्रभाव परिवार, धर्म या राज्य द्वारा डाले जाये।''

बोध प्रश्न–

टिप्पणी

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थानों में अपने उत्तर लिखिये।

ख. इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों में से अपने उत्तर मिलान कीजिए।

5. शिक्षा के व्यापक एवं संकुचित अर्थ के मध्य कोई चार अन्तर बताइये।

....

....

....

....

2.5 शिक्षा की प्रक्रिया

एडम द्वारा परिभाषित शिक्षा की प्रक्रिया को इस रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है शिक्षक शिक्षण प्रक्रिया शिक्षार्थी एडम के अनुसार शिक्षा की प्रक्रिया दो ध्रुवों के बीच चलती है जिसमें शिक्षक का परिपक्व अनुभव, व्यक्तित्व, शिक्षार्थी के अपरिपक्व व्यक्तित्व में वांछित परिवर्तन लाने का कार्य करता है। शिक्षार्थी के विकास की यह प्रक्रिया न केवल संचेतन होती है, अपितु सविमर्श होती है अर्थात् शिक्षक के सम्मुख शिक्षार्थी के विकास की दिशायें स्पष्ट एवं पूर्व निर्धारित होती है। यह परिवर्तन दो माध्यमों से होता है। प्रथम तो अध्यापक के व्यक्तित्व के प्रत्यक्ष प्रभाव एवं द्वितीय ज्ञान के विविध रूपों द्वारा। कठोपनिषद् में शिक्षण की प्रक्रिया जो इस रूप में व्याख्या की गयी है।

सहनाववतु सहनौभुनक्तु सहवीर्यं करवावहै।

तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।।

सहनाववतु– साथ–साथ हम एक दूसरे की रक्षा करे, अर्थात् शिक्षक शिक्षार्थी दोनों ही एक दूसरे के नैतिक विकास में सहायक होते हैं, तथा सम्भावित पतन से एक दूसरे की रक्षा की जाती है।

सहनौभुनक्तु– साथ–साथ उपभोग करें, अर्थात् ज्ञानार्जन से उपलब्ध सिद्धियों का उपभोग शिक्षक व छात्र मिल–जुलकर करें। अर्थात् ज्ञान की वृद्धि भी साथ–साथ होती है।

सहवीर्यं करवावहै– एक दूसरे के शौर्य की रक्षा करें।

तेजस्विनावधीतमस्तु– अध्ययन के फलस्वरूप तेजस्वी बनें।

सा विद्विषावहै– एक दूसरे की उन्नति से ईर्ष्या न करें।

उक्त व्याख्या यह स्पष्ट करती है कि शिक्षा की प्रक्रिया दो तरफा है शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों एक दूसरे से प्रभावित होते हैं।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थानों में अपने उत्तर लिखिये।

ख. इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों में से अपने उत्तर मिलान कीजिए।

6. शिक्षा की प्रक्रिया किन दो ध्रवों के बीच चलती है?

....

2.6 शिक्षा के अंग अथवा घटक

शिक्षा प्रक्रिया के मुख्यतः दो अंग होते हैं– एक सीखने वाला और दूसरा सिखाने वाला। नियोजित शिक्षा में सीखने वाले शिक्षार्थी कहे जाते हैं और सिखाने वाले शिक्षक। नियोजित शिक्षा के तीन अंग और होते हैं– पाठ्यचर्या, पर्यावरण और शिक्षण कला एंव तकनीकी।

शिक्षार्थी – इसका अर्थ है सीखने वाला। यह शिक्षा प्रक्रिया का सबसे पहला और मुख्यतम अंग होता है। शिक्षार्थी की अनुपस्थिति में शिक्षा की प्रक्रिया चलने का कोई प्रश्न ही नहीं। शिक्षा अपनी रूचि, रूझान और योग्यता के अनुसार ही सीखता है। सीखने की क्रिया शिक्षार्थी के शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य, उसकी अभिवृद्धि, विकास एवं परिपक्वता और सीखने की इच्छा, पूर्व अनुभव, नैतिक गुणों, चरित्र, बल, उत्साह, थकान एवं उसकी अध्ययनशीलता पर निर्भर करती है। अध्यापक सीखने में एक सहायक रूप में कार्य करता है।

शिक्षक– शिक्षा के व्यापक अर्थ में हम सब एक दूसरे को प्रभावित करते हैं, सीखते हैं, इसलिये हम सभी शिक्षार्थी और सभी शिक्षक हैं। परन्तु संकुचित अर्थ में कुछ विशेष व्यक्ति, जो जान बूझकर दूसरों को प्रभावित करते हैं और उनके आचार–विचार में परिवर्तन करते हैं, शिक्षक कहे जाते हैं। शिक्षक के बिना नियोजित शिक्षा की कल्पना आज भी सम्भव नहीं है। शिक्षक बालक के विकास में पथ–प्रदर्शक का कार्य करता है।

पाठ्यचर्या– नियोजित शिक्षा के उद्देश्य निश्चित होते हैं। इन निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये बच्चों को ज्ञान की विभिन्न शाखाओं अर्थात् विषयों का ज्ञान कराया जाता है, और उन्हें विभिन्न प्रकार की क्रियायें करायी जाती हैं। सामान्यतः इन सबको पाठ्यचर्या कहा जाता है। वास्तविक अर्थ में पाठ्यचर्या और अधिक व्यापक होती है,

उनमें विषयों के ज्ञान एवं क्रियाओं के प्रशिक्षण के साथ –साथ वह पूर्ण सामाजिक पर्यावरण भी आता है, जिसके द्वारा यथा उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपने उत्तर लिखिये।

ख. इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

7. ''पाठ्यचर्या'' शब्द से तुम क्या समझते हो?

....

....

....

8. शिक्षार्थी और शिक्षक के मध्य क्या सम्बंध होता है?

....

....

....

2.7 शिक्षा के रूप

समकालीन शिक्षा विचारक जिद्दू कृष्णमूर्ति के अनुसार–''शिक्षा बचपन से ही जीवन की समूची प्रक्रिया को समझने में सहायता करने की क्रिया है।'' अर्थात् उनके अनुसार शिक्षा का अर्थ समग्र जीवन का विकास, सम्पूर्णता, जीवन का समूचापन। उनका मानना है कि–

''जीवन बड़ा अद्भुत है वह असीम और अगाध है, यह अनन्त रहस्यों को लिये हुये है। यह एक विशाल साम्राज्य है जहां हम मानव कर्म करते हैं और यदि हम अपने आपको केवल आजीविका के लिये तैयार करते हैं तो हम जीवन का पूरा लक्ष्य ही खो देते हैं। कुछ परीक्षायें उत्तीर्ण कर लेने और रसायनशास्त्र अथवा अन्य किसी विषय में प्रवीणता प्राप्त कर लेने की अपेक्षा जीवन को समझना कहीं ज्यादा कठिन है।''

शिक्षा के अनेक रूप माने जाते हैं हम उनका संक्षिप्त अध्ययन करेंगे–

(1) औपचारिक, निरौपचारिक एवं अनौपचारिक–

औपचारिक शिक्षा– व्यवस्था की दृष्टि से शिक्षा के तीन रूप हैं– औपचारिक, निरौपचारिक और अनौपचारिक। वह शिक्षा जो विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में दी जाती है, औपचारिक शिक्षा कही जाती है। इसके उद्देश्य, पाठ्यचर्या और शिक्षण विधियां सभी निश्चित होते हैं। यह योजनाबद्ध होती है और इसकी योजना बड़ी कठोर

होती है। इसमें सीखने वालों को विद्यालय समय सारिणी के अनुसार कार्य करना होता है। यह शिक्षा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। यह शिक्षा व्यय साध्य होती है। इसे कई स्तरों पर व्यवस्थित किया जाता है प्रत्येक स्तर पर परीक्षा और प्रमाण–पत्र की व्यवस्था की जाती है।

अनौपचारिक शिक्षा– वह शिक्षा जिसकी योजना नहीं बनायी जाती न ही निश्चित उद्देश्य होते हैं, न पाठ्यचर्या और न शिक्षण विधियॉ और जो आकस्मिक रूप से सदैव चलती रहती हैं उसे अनौपचारिक शिक्षा कहते हैं। इस प्रकार की शिक्षा मनुष्य के जीवन भर चलती रहती है। परिवार एवं समुदाय में रहकर हम जो सीखते हैं उसमे से वह सब जो समाज हमें सिखाना चाहता है अनौपचारिक शिक्षा की कोटि में आता है। मनौवैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्य के व्यक्तित्व का तीन चौथाई निर्माण उसके पहले पॉच वर्षों में हो जाता है और इन वर्षों में शिक्षा प्रायः अनौपचारिक रूप से ही चलती है।

निरौपचारिक शिक्षा– वह शिक्षा जो न तो औपचारिक शिक्षा की भांति विद्यालयी शिक्षा की सीमा में बांधी जाती है और न अनौपचारिक शिक्षा की भांति आकस्मिक रूप से संचालित होती है, निरौपचारिक शिक्षा कहलाती है। इस शिक्षा का उद्देश्य, पाठ्यचर्या और शिक्षण विधियां प्रायः निश्चित होते हैं, परन्तु औपचारिक शिक्षा की भांति कठोर नहीं होते। यह शिक्षा लचीली होती है। इसका उद्देश्य प्रायः सामान्य शिक्षा का प्रसार और सतत् शिक्षा की व्यवस्था करना होता है। इस पाठ्यचर्या को सीखने वालों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। समय व स्थान भी सीखने वालों की सुविधा को ध्यान में रखकर निश्चित किया जाता है। यह शिक्षा व्यक्ति की शिक्षा को निरन्तरता प्रदान करने का कार्य करती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिये।

ख. इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

9. औपचारिक शिक्षा किसे कहते हैं?

....

....

10 अनौपचारिक शिक्षा की दो विशेषता बताइये।

....

....

11 निरौपचारिक शिक्षा क्या है?

....

....

2.8 प्रौढ़ शिक्षा, खुली शिक्षा, दूर शिक्षा एवं जीवन पर्यन्त शिक्षा

निरौपचारिक शिक्षा के भी अनेक रूप हैं। जैसे प्रौढ़ शिक्षा, खुली शिक्षा, दूर शिक्षा और जीवन पर्यन्त शिक्षा अथवा सतत् शिक्षा।

प्रौढ़ शिक्षा – इस प्रकार की शिक्षा 15–35 वर्ष की आयु वर्ग के निरक्षर एवं अशिक्षित व्यक्तियों को शिक्षा प्रदान करने के लिये होती है। यह शिक्षा उन्हें जीवन जीने की कला, अधिकार एवं कर्तव्यों का ज्ञान, आर्थिक अभिक्षमता तथा भावी समाज के निर्माण हेतु योग्य बनाती है। यह शिक्षा देश मे सम्पूर्ण साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक है।

खुली शिक्षा– खुली शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र में एक नया आन्दोलन है। न आयु, न योग्यता, न समय और न स्थान न पाठ्यक्रम का बंधन और न ही कक्षा शिक्षण बंधन, इस शिक्षा की प्रमुख विशेषता है। यह शिक्षा सबका, सब जगह, सब समय उपलब्ध होने वाली शिक्षा है, इसलिये इसे खुली शिक्षा कहा गया है। खुली शिक्षा को बढ़ावा देने में इवान इलिच का बहुत बड़ा हाथ है। उनकी पुस्तक ''दी स्कूलिंग सोसाइटी'' में उन्होंने खुली शिक्षा के सकारात्मक पक्ष उजागर किये। यूरोप में इस शिक्षा को काफी सफलता मिली इसके पाठ्यक्रम अति विस्तृत और जीवनोपयोगी है। हमारे देश में खुली शिक्षा का शुभारम्भ सबसे पहले 1977 ई0 में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में हुआ। यह शिक्षा पत्राचार, आकाशवाणी, टेपरिकार्डर, कैसेट्स, दूरदर्शन और वीडिया कैसेट्स के माध्यम से दी जाती है। इसके माध्यम से शिक्षण व्यवस्था करने में नवीनता व रोचकता रहती है।

दूर शिक्षा– दूर शिक्षा मूलतः किसी देश के दूर–दराज में रहने वाले उन व्यक्तियों को शिक्षा सुलभ कराने का एक विकल्प है जो औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। सीखने वालो को किसी भी शिक्षण संस्थान में नहीं जाना पड़ता वरन् अपने स्थान पर पत्राचार, आकाशवाणी, टेप रिकार्डर कैसेट या दूरदर्शन, विडियो कैसेट्स के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस शिक्षा का श्रीगणेश 1856 में बर्लिन(जर्मनी) में हुआ है। हमारे देश में दूर शिक्षा का श्रीगणेश सर्वप्रथम विश्वविद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में हुआ। यह उन लोगों के लिये सुअवसर उपलब्ध कराती है, जो किसी भी कारण शिक्षा नहीं प्राप्त कर पाते हैं। दूर शिक्षा की पाठ्य सामग्री एवं शिक्षण विधियों के क्षेत्र में निरन्तर शोध एवं परिवर्तन होते रहते हैं, ये सदैव अद्यतन एवं उपयोगी होते हैं।

जीवन पर्यन्त शिक्षा – जीवन पर्यन्त शिक्षा का अर्थ है व्यक्ति द्वारा बदली हुयी परिस्थितियों में कुशलतापूर्वक समायोजन करने के लिये जीवन पर्यन्त अद्यतन ज्ञान की प्राप्ति अथवा कौशल में प्रशिक्षण अथवा तकनीकी की जानकारी देना। काम के साथ शिक्षा ही इसकी विशेषता है। यह सतत् शिक्षा का विशिष्ट रूप है। प्राचीन काल में भी आजीवन शिक्षा सम्बंधी तथ्य या कि ज्ञान का भण्डार असीमित है अतः इसकी प्राप्ति हेतु अवकाशकाल में जीवन भर अध्ययन करना चाहिये। यह शिक्षा मनुष्य को हर समय अद्यतन ज्ञान एवं कौशल प्राप्त करने हेतु अवसर सुलभ कराती है, और उसे नयी

परिस्थितियों में समायोजन की कुशलता विकसित करती है। यह निरन्तर मनुष्य की समझ व कार्यकुशलता को विकसित करती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

11. प्रौढ़ शिक्षा किस वर्ग के लोगों के लिये उपयोगी है?

....

....

12. दूर शिक्षा के क्या गुण है?

....

....

13. प्राचीन काल में जीवन पर्यन्त शिक्षा की क्या अवधारणा थी?

....

....

2.9 सामान्य एवं विशिष्ट शिक्षा

सामान्य शिक्षा– विषय क्षेत्र की दृष्टि शिक्षा के दो रूप होते है। सामान्य और विशिष्ट। वह शिक्षा जो किसी समाज के प्रत्येक मनुष्य के लिये आवश्यक होती है, वह सामान्य शिक्षा कहलाती है। इसके द्वारा समाज की सभ्यता एवं संस्कषति का हस्तान्तरण होता है। यह उदार शिक्षा कहलाती है। यह शिक्षा मनुष्य की परम आवश्यकता होती है। इस शिक्षा में मनुष्य के चरित्र एवं आचरण पर अधिक बल दिया जाता है। यह समाज के आर्थिक उत्थान में सहायक नहीं हो पाती है।

विशिष्ट शिक्षा– वह शिक्षा जो किसी समाज के व्यक्तियों को विशिष्ट उद्‌देश्य सामने रखकर दी जाती है विशिष्ट शिक्षा कहलाती है। इसके द्वारा मनुष्य को एक निश्चित कार्य– जैसे बढ़ईगिरी, लोहारगिरी, कताई–बुनाई अध्यापन आदि के लिये तैयार किया जाता है। इसे व्यावसायिक शिक्षा भी कहते हैं। यह शिक्षा से मनुष्य की सष्जनात्मक शक्तियों को विकसित किया जाता है। इस शिक्षा द्वारा ही कोई व्यक्ति समाज अथवा राष्ट्र में व्यावसायिक उन्नति करता है और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होता है।

दोनों ही प्रकार की शिक्षा का अपना–अपना महत्व है। मनुष्य को मनुष्य एवं

सामाजिक प्राणी बनाने के लिये सामान्य अर्थात् उदार शिक्षा की आवश्यकता होती है तो दूसरी ओर अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विशिष्ट एवं व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता होती है।

सकारात्मक एवं नकारात्मक शिक्षा

सकारात्मक शिक्षा– शिक्षण विधि के आधार पर शिक्षा को सकारात्मक एवं नकारात्मक दो रूपों में विभक्त किया जाता है। सकारात्मक शिक्षा में हम अपने नव आगन्तुक पीढ़ी को अपनी जाति के अनुभवों एवं आर्दशों से कम समय में ही परिचित कराने का प्रयास करते है। सत्य बोलना मानव धर्म निभाना, धर्म का पालन करना, झूठ न बोलना आदि सकारात्मक शिक्षा है, परन्तु इस प्रकार सीखा हुआ ज्ञान स्थायी नहीं होता है।

नकारात्मक शिक्षा– नकारात्मक शिक्षा वह है जिसमें बच्चों को स्वयं अनुभव करके तथ्यों की खोज करने एवं आर्दशों का निर्माण करने के अवसर दिये जाते हैं, अध्यापक तो केवल, इन तथ्यों की खोज एवं आर्दशों के निर्माण के लिये बच्चों को अवसर प्रदान करता है और उनका दिशा निर्देशन करता है। इस प्रकार सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है।

करके सीखने एवं स्वानुभव द्वारा सीखने से ज्ञान स्थायी होता है, परन्तु इसके लिये शक्ति और परिपक्वता चाहिये। मनुष्य को अपने जाति द्वारा दिये गये पूर्व के अनुभवों से लाभ उठाना चाहिये। बच्चों को अनुभव एवं आर्दश सीधे बताकर उन्हें उनके जीवन के सम्बंधित कर दिये जाये और प्रयोग एवं तर्क द्वारा उनकी सत्यता स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

15. विशिष्ट शिक्षा का क्या उपयोग है?

....

....

....

16. नकारात्मक शिक्षा की क्या विशेषता होती है?

....

....

2.10 शिक्षा के साधन

साधन अंग्रेजी शब्द ''एजेन्सी'' का हिन्दी रूपान्तरण है– एजेन्सी का अर्थ है एजेन्ट का कार्य। एजेन्ट से हमारा अभिप्राय उस व्यक्ति या वस्तु से होता है, जो कोई कार्य करता है या प्रभाव डालता है। अतः शिक्षा के साधन– वे तत्व कारण स्थान या संस्थायें है जो बालक पर शैक्षिक प्रभाव डालते हैं। समाज ने शिक्षा के कार्यों को करने के लिये अनेक विशिष्ट संस्थाओं का विकास किया है। इन्हीं संस्थाओं को शिक्षा के साधन कहा जाता है। इनको इस प्रकार वर्गीकृत किया गया है।

1. औपचारिक और अनौपचारिक
2. निष्क्रिय एवं सक्रिय साधन

जॉन डी0वी0 ने शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक साधनों को शिक्षा की साभिप्राय और आकस्मिक विधियां बताया है। हैण्डरसन ने लिखा है– जब बालक व्यक्तियों के कार्यों को देखता है उसका अनुकरण करता है और उनमें भाग लेता है तब वह अनौपचारिक रूप से शिक्षित होता है। जब उसको सचेत करके जान बूझकर पढ़ाया जाता है, तब वह औपचारिक रूप शिक्षा प्राप्त करता है।''

- **औपचारिक साधन–** शिक्षा के ये साधन योजनाबद्ध होते हैं। इनके नियम व योजना निश्चित होते हैं। इनमें प्रशिक्षित व्यक्ति देखभाल करते हैं। यह शिक्षा किताबी व विद्यालयीय शिक्षा भी कहलाती है। इनके अन्तर्गत स्कूल पुस्तकालय, चित्र भवन एवं पुस्तक आते हैं।
- **अनौपचारिक साधन–** शिक्षा के अनौपचारिक साधनों का विकास स्वाभाविक रूप से होता है। इसकी न तो योजना न ही नियम होते है। ये बालकों के आचरण का रूपान्तरण करते हैं पर यह प्रक्रिया अज्ञात अप्रत्यक्ष और अनौपचारिक होती है। इसके अन्तर्गत परिवार, धर्म, समाज, राज्य रेडियो, समाचार–पत्र आदि आते हैं।

औपचारिक शिक्षा बड़ी सरलता से तुच्छ निर्जीव अस्पष्ट और किताबी बन जाती है। औपचारिक शिक्षा जीवन के अनुभव से कोई सम्बंध न रखकर केवल विद्यालयों की विषय सामग्री बन जाती है। वही दूसरी ओर बालक अनौपचारिक ढंग से दूसरों के साथ रहकर शिक्षा प्राप्त करता है और साथ रहने की प्रक्रिया ही शिक्षा देने का कार्य करती है। यह प्रक्रिया अनुभव को विस्तष्त करती है।

सक्रिय व निष्क्रिय साधन–

सक्रिय साधन– सक्रिय साधन सामाजिक प्रक्रिया पर नियंत्रण रखने और उसको एक निश्चित दिशा देने का प्रयत्न करते हैं। इनमें शिक्षा देने वाले और शिक्षा प्राप्त करने वाले में प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया होती है, दोनों एक दूसरे पर क्रिया प्रतिक्रिया करते हैं। सक्रिय साधन के उदाहरण हैं– परिवार, समाज, राज्य, स्कूल, आदि।

निष्क्रिय साधन–निष्क्रिय साधन वे हैं जिनका प्रभाव एक तरफा होता है। इनकी प्रक्रिया एक ओर से होती है, क्योंकि ये एक ही को प्रभावित करते हैं। इस प्रक्रिया में एक पक्ष सक्रिय होता है और दूसरा निष्क्रिय। ये साधन दूसरों को तो प्रभावित करते हैं पर स्वयं दूसरों से प्रभावित नहीं होते हैं। निष्क्रिय साधनों के उदाहरण हैं– सिनेमा, टेलीविजन, रेडियो, प्रेस इत्यादि।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

17. औपचारिक और अनौपचारिक साधन के मध्य दो अन्तर बताइये?

....

18. सक्रिय व निष्क्रिय साधन के मध्य क्या अन्तर है?

....

2.11 शिक्षा के कार्य

शिक्षा गतिशील है। डेनियल बेक्स्टर के अनुसार– ''शिक्षा का कार्य भावनाओं को अनुशासित, संवेगों को नियंत्रित, प्रेरणाओं को उत्तेजित, धार्मिक भावना को विकसित और नैतिकता को अभिवृद्धित करना है।''इसी प्रकार जॉन डी0वी0 के अनुसार– ''शिक्षा का कार्य असहाय प्राणी के विकास में सहायता पहुॅचाना है ताकि वह सुखी, नैतिक और कुशल मानव बन सके।'' शिक्षा का कार्य देश और काल के अनुरूप बदलता रहता है, परन्तु उसके सामान्य कार्यों को हम दो भागों में विभक्त करके देख सकते हैं।

1. मानव जीवन में शिक्षा के कार्य
2. सामाजिक/राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य

मानव जीवन में शिक्षा के कार्य :– उत्तम नागरिक उत्तम राज्य का आधार स्तम्भ होता है। और उत्तम नागरिक वह है जो कि अपने एवं राष्ट्र दोनों के लिये उपयोगी हो अर्थात् मानव जीवन में बदलाव लाने का कार्य शिक्षा का ही है। मानव जीवन में शिक्षा यह कार्य करती है–

1. **मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास मार्गान्तीकरण और उदात्तीकरण–** मनुष्य कुछ मूलभूत शक्तियों को लेकर पैदा होता है शिक्षा का कार्य इन शक्तियों का विकास करना है। मानव के शक्तियों का विकास व्यक्ति और समाज दोनों के हितों को ध्यान में रखकर किया जाता है। वह मूलभूत प्रवृत्यात्मक व्यवहार से सामाजिक व्यवहार की ओर उन्मुख होता है।

2. **संतुलित व्यक्तित्व का विकास–** शिक्षा का प्रमुख कार्य संतुलित व्यक्तित्व का विकास करना भी है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक एवं संवेगात्मक पक्ष आते हैं। शिक्षा इन सभी पहलुओं का संतुलित विकास करती है।

3. **चरित्र निर्माण एवं नैतिक विकास–** शिक्षा का अति महत्वपूर्ण कार्य चरित्र का निर्माण एवं उसका नैतिक विकास करना है। शिक्षा के इस कार्य पर डॉ0 राधाकृष्णन ने बल देते हुये लिखा है– ''चरित्र भाग्य है। चरित्र वह वस्तु है जिस पर राष्ट्र के भाग्य का निर्माण होता है। तुच्छ चरित्र वाले मनुष्य श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकते हैं।''

सामाजिक भावना का समावेश – व्यक्ति समाज का अभिन्न अंग है। समाज से दूर रहकर जीना असम्भव है, अतः यह आवश्यक है कि उसमें सामाजिक गुणों का विकास किया जाये। सामाजिक गुणों के विकास का कार्य भी शिक्षा का ही है। एच0 गार्डन के अनुसार– ''शिक्षक को यह जानना आवश्यक है कि उसे सामाजिक प्रक्रिया में उन व्यक्तियों को समझना चाहिये जो इसे समझने में असमर्थ हैं।''

आवश्यकताओं की पूर्ति– समाज में शिक्षा का प्रमुख कार्य आवश्यकताओं की पूर्ति है, जीवधारी होने के कारण उसकी कुछ मूलभूत आवश्यकतायें है। रोटी, कपड़ा और मकान प्रमुख है इन सभी को प्राप्त करने योग्य बानाने का कार्य शिक्षा का है। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के इस कार्य की ओर इंगित करते हुये स्पष्ट लिखा है कि – ''शिक्षा का कार्य यह पता लगाना है कि जीवन की समस्याओं को किस प्रकार से कम किया जाये और आधुनिक सभ्य समाज का ध्यान इस ओर लगा हुआ है।''

आत्मनिर्भरता की प्राप्ति– मानव जीवन में शिक्षा का एक प्रमुख कार्य व्यक्ति को आत्म निर्भर बनाना है। ऐसा व्यक्ति समाज के लिये भी सहायक होता है, जो अपना भार स्वयं उठा लेता है। भारत जैसे विकासशील समाज में व्यक्ति को आत्म निर्भर बनाने का कार्य शिक्षा का है। स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा के इस कार्य को इंगित करते हुये लिखा था– ''केवल पुस्तकीय ज्ञान से काम नहीं चलेगा। हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है जिससे कि व्यक्ति अपने स्वयं के पैरों पर खड़ा हो सकता है।''

व्यावसायिक कुशलता की प्राप्ति– हमारा देश बड़ी तेजी से विकास की ओर बढ़ रहा है। वैश्वीकरण के दौर में हमें ऐसे मानव संसाधन की आवश्यकता है जो कुशल हो और अर्थ व्यवस्था के विभिन्न पक्षों में अपना उत्तरदायित्व निभा सकें। ऐसे मानव संसाधन तैयार करने का कार्य शिक्षा का है। डॉ0 राधाकृष्णन के अनुसार– ''प्रयोगात्मक विषयों में प्रशिक्षित व्यक्ति कषषि और उद्योग के उत्पादन को बढ़ाने में सहायता देते है। ये विषय सरल एवं रोजगार पाने में सहायक होते है। शिक्षा का कार्य है– अर्थकारिका विद्या।''

जीवन के लिये तैयारी– विलमॉट ने स्पष्ट कहा है कि– ''शिक्षा जीवन की तैयारी

है।'' इससे स्पष्ट है कि शिक्षा का प्रमुख कार्य बच्चों को जीवन के लिये तैयार करना है। शिक्षा के इस कार्य पर विचार करते हुये स्वामी विवेकानन्द ने स्पष्ट लिखा है कि– ''क्या वह शिक्षा कहलाने के योग्य है जो सामान्य जन समूह को जीवन के संघर्ष के लियें अपने आपको तैयार करने में सहायता नही देती है और उनमें शेर सा साहस न उत्पन्न कर पाये।''

आध्यात्मिक विकास– भारतीय संस्कृति का सम्बन्ध चिरकाल से आध्यात्मिकता रही है। शिक्षा का एक प्रमुख कार्य मानव को उस पूर्ण एवं वास्तविक शक्ति का आभास कराना है। श्री अरविन्द ने लिखा है– ''शिक्षा का उद्देश्य – विकसित होने वाली आत्मा को सर्वोत्तम प्रकार से विकास करने में सहायता देना और श्रेष्ठ कार्य के लिये उसे पूर्ण बनाना है।''

वातावरण से अनुकूलन– वातावरण मनुष्य को स्वयं शिक्षित करता है और मनुष्य को प्रभावित करता है। वातावरण से अनुकूलन न कर सकने के कारण व्यक्ति का जीवन दुरूह हो जाता है। इस सम्बंध में टॉमसन ने लिखा है– ''वातावरण शिक्षक है, और शिक्षा का कार्य–छात्र को उस वातावरण के अनुकूल बनाना, जिससे कि वह जीवित रह सके और अपनी मूल–प्रवषत्तियों को सन्तुष्ट करने के लिये अधिक से अधिक सम्भव अवसर प्राप्त कर सके।''

वातवरण का रूप परिवर्तन– शिक्षा का एक प्रमुख कार्य व्यक्ति को वातावरण का रूप परिवर्तन करने या उसमें सुधार करने के योग्य बनाना है, यदि शिक्षा द्वारा व्यक्ति में अच्छी आदतों का निर्माण कर दिया जाये तो वह वातावरण में परिवर्तन कर सकता है। जॉन ड्यूवी ने लिखा है– ''वातावरण से पूर्ण अनुकूलन करने का अर्थ है मृत्यु। आवश्यकता इस बात की है कि वातावरण पर नियंत्रण रखा जाये।''

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

19. मानव जीवन में शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालिये।

....

....

2.12 राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा के कार्य

व्यक्तियों को श्रेष्ठता और हीनता– राष्ट्र के उत्थान और पतन का कारण होती है। मैकाइवर ने लिखा है– ''राष्ट्र का गुण, उसकी सामाजिक इकाइयों का गुण है, अर्थात्

सामाजिक इकाईयों का सामूहिक जीवन ही राष्ट्रीय जीवन है। यदि ईंधन ही खराब हो तो ज्योति कैसे तेज हो सकती है– अर्थात् यदि राष्ट्रीय इकाइयां निर्बल है, तो राष्ट्र कैसे देदीप्यमान हो सकता है।'' शिक्षा राष्ट्र के लिये यह कार्य करती है–

1. **कुशल श्रमिकों की पूर्ति –** राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का कार्य अर्थ व्यवस्था को कुशल श्रमिकों की पूर्ति करना है। शिक्षित एवं दक्ष श्रमिक अर्थव्यवस्था में बेहतर सहयोग देंगे। हुमायूँ, कबीर ने इस सम्बंध में लिखा है– ''शिक्षित श्रमिक अधिक उत्पादन में सहयोग देंगे और इस प्रकार उद्योग एवं व्यवसाय दोनों की अधिक उन्नति होगी।''

2. **व्यक्तिगत हित की सार्वजनिक हित से निम्नता–** राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह लोगों को ऐसा प्रशिक्षण दें कि वे अपने हितों को अपने समूह समाज, देश और राष्ट्र के हितों से निम्न समझें। डॉ0 राधाकृष्णन ने इस आवश्यकता को भारत के परिप्रेक्ष्य में लिखा है– ''एशिया में प्रजातंत्र की सफलता हमारी अनुशासन में रहने की इच्छा और व्यक्तिगत बलिदान पर आधारित है। यदि भारत संयुक्त और लोकतंत्रीय रहना चाहता है, तो शिक्षा को लोगों की एकता के लिये न कि प्रादेशिकता के लिये, प्रजातंत्र के लिये, न कि तानाशाही के लिये प्रशिक्षित करना चाहिये।''

3. **समाजिक कुशलता की उन्नति–** आधुनिक विचारधारा के अनुसार कुशल सामाजिक व्यक्ति वह है जो अपने समाज या राष्ट्र के लिये भार न हो, दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करें और समाज की उन्नति में योगदान दें। शिक्षा का कार्य यह है कि वह छात्रों को व्यवसाय एवं उद्योगों में कुशल बनाये, जो न केवल उनके लिये वरन समाज और राष्ट्र के लिये उपयोगी सिद्ध हों

4. **नागरिक व सामाजिक कर्तव्यों की भावना का समावेश–** शिक्षा की प्रमुख भूमिका विभिन्न स्तर पर अपने पाठ्यक्रमों में ऐसे तत्वों को समाहित करना है जिससे कि भावी पीढ़ी इस रूप में शिक्षित हो कि वे नागरिक के रूप में अपने देश व समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को समझें और उसे कार्य रूप में परिणित करें।

5. **नेतष्त्व के लिये प्रशिक्षण–** राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा का एक प्रमुख कार्य भावी पीढ़ी के इस प्रकार से प्रशिक्षित करना है, जिससे कि वे सामाजिक, राजनैतिक, औद्योगिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में नेतष्त्व का कार्य कर सके। डॉ0 आर0एस0मणि ने लिखा है– भारत जैसा कि लोकतंत्र हो गया है इसे अच्छे नेतृत्व की आवश्यकता है। सच्चे नेतष्त्व के साथ सेवा की भावना के साथ अच्छे प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

6. **राष्ट्रीय विकास–** किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था उस देश के विकास की आधारशिला होती है। शिक्षा व्यवस्था जैसी होगी वैसी ही राष्ट्रीय विकास होगा

क्योंकि शिक्षा सफल सक्षम एवं दक्ष नागरिक तैयार करती हैं और विशेषीकृत शिक्षा सभी स्तर पर अर्थव्यवस्था को दक्ष नागरिक देती है और आत्मनिर्भरता लाती है जिससे राष्ट्रीय विकास को बल मिलता है।

7. **आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को यथोचित गति देना–** आधुनिक समाज विज्ञान, आधारित तकनीकी पर आश्रित है। आधुनिकीकरण वर्तमान में विश्व सममत आवश्यकता है कोई भी समाज या देश इससे अछूता नहीं रहना चाहता है अतः शिक्षा प्रक्रिया इसको तीव्र बनाने का कार्य करती है और इसी के अनुकूल विस्तार कर शिक्षित और कुशल नागरिक तैयार करती है।

इस सम्बंध में शिक्षा आयोग का विचार है– आज के भारत में उत्तराधिकार में महान संस्कृति पाई है। परन्तु दुर्भाग्य यह है कि वह एक समुचित रूप से शिक्षित राष्ट्र नहीं रह गया है और जब तक वह शिक्षित नहीं हो जाता, तब तक वह अपने आपको आधुनिक नहीं बना पायेगा तथा राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण की नई चुनौतियों का उचित रूप से सामना नहीं कर सकेगा।''

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखे।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

20. राष्ट्रीय जीवन में शिक्षा की भूमिका का वर्णन कीजिये।

....

....

2.13 सारांश

इस इकाई में शिक्षा की अवधारणा एवं कार्यों की चर्चा की गयी है। शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुये इसके दार्शनिक सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक सम्प्रत्यय स्पष्ट किया गया है। शिक्षा के व्यापक एवं संकुचित अर्थ पर प्रकाश डालते हुए शिक्षा की प्रक्रिया का भी वर्णन किया गया है। इसके साथ शिक्षा के अंग एवं विभिन्न रूपों को भी वर्णित किया गया है। शिक्षा के साधन के साथ ही शिक्षा के मानव जीवन एवं राष्ट्रीय जीवन में कार्यों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

2.14 अभ्यास कार्य

1. शिक्षा से आप क्या समझते हैं? इसके आवश्यक अंगो एवं स्वरूपों का उल्लेख कीजिये।

2. शिक्षा की व्याख्या संकुचित एवं उदार दृष्टिकोण से किस प्रकार की जा सकती है? मानव जीवन में शिक्षा का क्या महत्व है?
3. आपके मतानुसार भारत जैसे लोकतंत्र देश में शिक्षा के क्या कार्य होने चाहिये?

2.15 बोध प्रश्नों के उत्तर–

1. 'शिक्ष्' धातु।
2. प्रशिक्षण, संवर्द्धन और पथ–प्रदर्शन करने के कार्य।
3. शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करना है, जिसके कि वे योग्य है।
4. शंकराचार्य के अनुसार– सः विद्या या विमुक्तये।

   स्वामी विवेकानन्द के अनुसार– मनुष्य को अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।
5. संकुचित अर्थ में– निश्चित योजना, विधि, समय के अनुसार विद्यालय में दी जाने वाले शिक्षा।

   व्यापक अर्थ में– आजीवन चलने वाली, जन्म से मष्त्यु तक सम्पूर्ण अनुभव, बिना योजना और अपने आसपास के वातावरण से शिक्षा।
6. शिक्षक एवं शिक्षार्थी।
7. पाठ्यचर्या– विद्यालय में शिक्षण एवं शिक्षणेत्तर सभी प्रकार के क्रियाकलाप।
8. शिक्षक और शिक्षार्थी एक दूसरे से सीखते हैं। शिक्षक मार्गदर्शक के रूप में।
9. औपचारिक शिक्षा– निश्चित समय, योजना उद्देश्य एवं विधियों द्वारा शिक्षा संस्थाओं में दी जाने वाली शिक्षा।
10. अनौपचारिक शिक्षा आकस्मिक रूप से सदैव चलती है, निरूद्देश्य बिना योजना और पाठ्यचर्या रहित होती है।
11. निरौपचारिक शिक्षा अनौपचारिक और औपचारिक शिक्षा से इतर होती है, यह लचीली होती है, और प्रायः सामान्य शिक्षा के प्रचार–प्रसार एवं सतत् शिक्षा की व्यवस्था है।
12. 15–35 वर्ष आयु वर्गके लोग।
13. दूर दराज के अधिगम कर्ताओं को अपने स्थान पर पत्राचार, आकाशवाणी एवं लिखित शिक्षण सामग्री द्वारा दिये जाने वाली बंधन रहित शिक्षा।
14. ज्ञान का भण्डार असीमित है व्यक्ति को जीवन भर इसे प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।
15. विशेष उद्देश्यों को सामने रखकर समाज के निश्चित वर्ग को दी जाने वाली शिक्षा जिससे कि सामान्य जीवन आसानी से जी सके।

16. स्वयं अनुभव के द्वारा तथ्यों की खोज करने एवं आदर्शो का निर्माण करने का अवसर देती है।

17. **औपचारिक साधन–** शिक्षा के ये साधन योजनाबद्ध होते हैं। इनके नियम व योजना निश्चित होते हैं। **अनौपचारिक साधन–** शिक्षा के अनौपचारिक साधनों का विकास स्वाभाविक रूप से होता है। इसकी न तो योजना न ही नियम होते है।

18. **सक्रिय साधन–** शिक्षा देने व प्राप्तकर्ता दोनों प्रतिक्रिया कर प्रभावित होता है।

    निष्क्रिय साधन– एक पक्ष सक्रिय दूसरा निष्क्रिय होता है।

19. शिक्षा का कार्य भावनाओं को अनुशासित, संवेगों को नियंत्रित, प्रेरणाओं को उत्तेजित, धार्मिक

    भावना को विकसित और नैतिकता को अभिवृद्धित करना है।

20. कुशल श्रमिकों की पूर्ति, व्यक्तिगत हित की सार्वजनिक हित से निम्नता, समाजिक कुशलता की उन्नति, आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को यथोचित गति देना।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

ओ0एल0के0 (2005) : शिक्षा की दार्शनिक पष्ठभूमि, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

Brubacher J.S (1962) : *Modern Philosophies of Education*, New York, MC-Graw Hill book Company

Pandey R.S (1998) : *East-West thoughts on Education* ,Vinod Pustak Mandir Agra

चतुर्वेदी एस0 आर0 (1970) : *शिक्षा दर्शन* – हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ

Hocking W.B. (1959) : *Types of Philosophies*, New York, Charles Scribricis Sons

Adams J. *: Educational Theories*, London Ernest Berrs

इकाई–3 शिक्षा और दर्शन के बीच सम्बंध

संरचना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 दर्शन और शिक्षा
3.4 शिक्षा का दर्शन पर प्रभाव
3.5 शिक्षा के लिये दर्शन की उपयोगिता
3.6 सारांश
3.7 अभ्यास कार्य
3.8 बोध प्रश्न
3.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

पूर्व की दो इकाइयों में दर्शन और शिक्षा के स्वरूप पर विचार किया गया था। इस अध्याय में इन दोनों के सम्बंधों का वर्णन किया जायेगा। प्रत्येक कार्य का कुछ न कुछ सैद्धान्तिक आधार होता है, हम कार्य करने के पूर्व उसके प्रयोजन की जानकारी रखते हैं। निष्प्रयोजन कार्य का भी तर्क निकालकर कारण जानने का प्रयास करते हैं। हमारे कार्य का सैद्धान्तिक आधार अवश्य होता है। यही तथ्य शिक्षा प्रक्रिया पर भी लागू होती है। हम शैक्षिक क्रियाओं का सैद्धान्तिक आधार जानने के प्रयास में परम चिन्तन की सीमा में प्रवेश करते हैं। शिक्षा के लक्ष्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, विद्यालय प्रबंध एवं अनुशासन पर विचार करते – करते दार्शनिक विवेचन करने लगते हैं। हमारा दार्शनिक दृष्टिकोण शिक्षा के अंगों को प्रभावित करता रहता है। हमारा चिन्तन ही हमारा दर्शन है। हमारा दर्शन हमारी क्रियाओं में परिलक्षित होता है। शिक्षा के विभिन्न अंगों को दर्शन कैसे प्रभावित करता है, इसको इस इकाई में वर्णित किया गया है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे–

- जीवन दर्शन एवं शिक्षा के मध्यम सम्बंध को समझ सकेंगे।
- दर्शन एवं शिक्षा के अनन्योन्याश्रितता का वर्ण कर सकेंगे।
- शिक्षा का दर्शन पर प्रभाव को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा के लिये दर्शन की उपयोगिता का विश्लेषण कर सकेंगे।

3.3 दर्शन और शिक्षा

दर्शन शब्द संस्कृत की दृश् धातु से बना है। ''दृश्यते यथार्थतत्वमनेन'' अथार्त

जिसके द्वारा यर्थाथ तत्व की अनुभूति ही वही दर्शन है। अंग्रेजी के शब्द फिलॉसफी का शाब्दिक अर्थ ज्ञान के प्रति अनुराग होता है। भारतीय व्याख्या में अधिक गहराई तक पैठ बनाती है। क्योंकि भारतीय अवधारणा के अनुसार सम्पूर्ण जीवन दर्शन का क्षेत्र है। दर्शन चिन्तन का विषय न होकर अनुभूति का विषय माना जाता है। दर्शन के द्वारा बौद्धिक तृप्ति का भी आभास न होकर समग्र व्यक्तित्व बदल जाता है। भारतीय दृष्टिकोण में दर्शन केवल आत्म–ज्ञान ही न होकर आत्मानुभूति है। दर्शन का कार्य निहित सत्य पर प्रकाश डालना है। इस निहित तथ्य को जान लेने पर व्यक्ति समस्या को हल कर लेता है और शिक्षा व्यक्ति को वह क्षमता प्रदान करती है जिसके द्वारा वह समस्या में निहित सत्य का ज्ञान प्राप्त करता है। अर्थात् बिना सम्यक शिक्षा के व्यक्ति दर्शन को नहीं समझ पाता । प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का कोई न कोई दर्शन अवश्य होता है चाहे व्यक्ति उसके सम्बंध में संचेतन हो या न हो। जैसा कि अल्डूस हक्सले लिखते हैं– ''सभी लोग अपने जीवन के अनुरूप अर्थात् जगत के सम्बंध में अपनी धारणा के अनुसार जीवन बिताते हैं। यह बात चिन्तन–शून्य लोगों के लिये भी सही है। तत्व–ज्ञान के बिना जीना असम्भव है। तत्व चिन्तन अथवा तत्व चिन्तन शून्यता के बीच हमारे पास कोई विकल्प नहीं है, अपितु विकल्प केवल सत्सत्व–चिन्तन और मुतत्व–चिन्तन के बीच है।''

दर्शन हमारी भावनाओं तथा मनोदशाओं की प्रतिबिम्बत करता है और ये भावनायें कार्यों को नियंत्रित करती हैं। शिक्षा का एक प्रमुख कार्य स्वस्थ मनोवषत्तियों का निर्माण करना है, अतः दर्शन से शिक्षा को प्रयोग करनी पड़ती है।

मानव एक विचारशील प्राणी है, और सभी मनुष्य अपने जीवन दर्शन संसार के सम्बधं में अपने विचार के अनुसार रहते हैं, यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति सोच समझकर जीवन के सत्य खोजता है और उन्हीं के अनुसार अपना निर्वाह करता है। और जीवन निर्वाह के पीछे जो सत्य सिद्धान्त आदर्श एवं मूल्य जो कुछ भी होते हैं उस व्यक्ति के जीवन दर्शन कहलाते है। इस जीवन दर्शन पर व्यक्ति की शिक्षा का प्रभाव पड़ता है। इसी कारण विभिन्न जीवन दर्शन के अनुसार विभिन्न शैक्षिक एवं दार्शनिक मत हुये। महात्मा गांधी ने सत्य को अपनाया और अहिंसा के मार्ग पर चलकर अपना अंहिसात्मक आदर्शवादी दर्शन स्थापित किया। चार्वाक ने जीवन के मौज उठाने का दर्शन दिया और यही उनका भोगवादी दर्शन स्थापित हुआ, दूसरी भोगवादी जीवन के विपरीत कष्टमय जीवन बिताने को कहा गया और यौगिक दर्शन का उदय हुआ। ईश्वर के एक दो एवं बहुरूप मानने वालों ने एकतत्ववाद, द्वितत्ववाद और बहुतत्ववादी दर्शन स्थापित किये, और इनका प्रभाव शिक्षा पड़ा और फिर शिक्षा ने को प्रभावित किया।

शिक्षा के दो पक्ष होते हैं– प्रथम चिन्तन पक्ष तथा द्वितीय पक्ष व्यवहार पक्ष। अनुभव अथवा व्यवहार करते समय अनेक समस्यायें हमारे सम्मुख उपस्थित होती हैं। इन समस्याओं पर चिन्तन करके उनके आधार पर सिद्धान्तों का निरूपण करना दर्शन का कार्य होता है। इसके अतिरिक्त शिक्षा भी जीवन एक पक्ष है, और जीवन के मौलिक

प्रश्नों से शिक्षा के प्रश्न अन्ततः जुड़े हुये है। जीवन के मौलिक प्रश्नों की व्याख्या दर्शन करता है। इस दृष्टि से भी दर्शन तथा शिक्षा एक दूसरे से जुड़े हुये हैं। हमें दर्शन के शिक्षा पर प्रभाव और दर्शन पर शिक्षा के प्रभाव को अलग–अलग से देखना चाहिये।

शैक्षिक सिद्धान्त : दार्शनिक विचारों के व्यावहारिक प्रयोग– प्रत्येक जीवन दर्शन एक निश्चित विश्वास पर निर्भर करता है। विश्वास जीवन को दिशा और स्थायित्व देता है। तब इन विश्वास को व्यक्ति अपने भावी पीढ़ी को देना चाहता है और इनका शैक्षिक महत्व बढ़ जाता है। डी0वी0 का कहना है कि ''दर्शन अपने सामान्यतम रूपों में शिक्षा का सिद्धान्त है।'' विश्व के महान दार्शनिकों महात्मा गांधी, प्लेटो, अरस्तु, डी0वी0 आदि को देखे तो उनके दार्शनिक विचार उनके शैक्षिक विचारों एवं सिद्धान्त के रूप में परिलक्षित हुये।

जीवन में शिक्षा के महत्व के स्थापन में दर्शन– दर्शन ही शिक्षा का जीवन में महत्व स्थापित करता है, शिक्षा मानव की नितान्त आवश्यकता है, उसकी समस्त क्रियायें और प्रतिक्रियायें अनवरत चलती रहती है। दर्शन जीवन के लक्ष्य, उसके रहस्य सत्यं शिवम् सुन्दरं को प्राप्त करने, उसको आदर्श रूप में आगे बढ़ने एवं आदर्श स्थापित करने में भी आधार रूप में कार्य करता है। जीवन का मूल्य और दर्शन शिक्षा में निहित होता है। जीवन के सत्य तथ्यों की खोज दर्शन है और उसे खोजने का और व्यवहार करने का क्षेत्र शिक्षा से प्राप्त होती है। दर्शन प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को एक रंग जीवन प्रवाह देता है एवं उसके नीजी विशेषताओं विचारों और क्रियाओं को प्रचारार्थ उत्तेजना तथा साधन भी प्रदान करता है, विचारों एवं कार्यों को देने और दूसरें से लेने में शिक्षा की प्रक्रिया निहित होती है। इस प्रकार दर्शन एवं शिक्षा दोनों का अटूट सम्बंध जीवन से है।

एच0एन0हार्न के अनुसार– सभी तथ्य अन्त में एकसा अर्थ रखते हैं, पर उनके अर्थों की समानता में अपना स्वयं का अनोखापन है। जिस प्रकार सड़को पर लगे संकेत बोर्ड विभिन्न मार्गों से एक ही नगर को जाने का संकेत करते हैं, उसी प्रकार विविध तथ्य एक ही अर्थ कह ओर संकेत करते है। वस्तुतः जीवन की वास्तविकता ही दर्शन का ईश्वरीय नगर है और संकेत बोर्डों में ''शिक्षा'' भी एक है।

शिक्षा का आधार दर्शन है – खोज एवं प्रयोग वर्तमान शिक्षा पद्धति की नवीन प्रवषति है। खोज एवं प्रयोग वैज्ञानिक दषष्टिकोण के द्योतक है पर वैज्ञानिक प्रवषति एवं दर्शन में सामंजस्य है, क्योंकि आधारभूत प्रत्ययों को समझने में दर्शन आधार देता है। फिक्टे के अनुसार शिक्षा दैवी स्वेच्छा शक्ति की एक खोज है। रूसो ने स्वीकार किया कि, वास्तव में मानव को धरोहर का अध्ययन ही शिक्षा है और वास्तव में जब तक दार्शनिक दषष्टिकोण है तब तक प्रश्न निकलेंगे और इन प्रश्नों का हल करना ही तो शिक्षा है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा को दर्शन एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

दर्शन व शिक्षा–एक सिक्के के दो पहलू– शिक्षा एक सामान्य एवं व्यापक प्रक्रिया

है जो कि मानव को उसके पूरे जीवन भर अनुभवों से परिपूर्ण कर सम्पूर्ण बनाती है और यह अनुभव समय काल एवं परिस्थिति के अनुसार व्यापक एवं स्वच्छ होते जाते हैं, और इन अनुभवों के निर्माण का कार्य दर्शन करता है। इस प्रकार दर्शन और शिक्षा दोनों की घनिष्ठता का प्रतिबिम्ब उभरता है। रॉस ने इन शब्दों में कहा–''दर्शन और शिक्षा–एक सिक्के के दो पहलुओ के समान है। एक में दूसरा निहित है। दर्शन जीवन का विचारात्मक पक्ष है और शिक्षा क्रियात्मक पक्ष।''

एडमस ने लिखा है– ''शिक्षा दर्शन का गतिशील पहलु है। यह दार्शनिक विश्वास का सक्रिय पक्ष और जीवन के आदर्शों को प्राप्त करने का व्यावहारिक साधन है। दर्शन सैद्धान्तिक एवं विचारमूलक तथा शिक्षा व्यवहार है।''

दर्शन व शिक्षा का पारस्परिक निर्भरता– दर्शन जीवन का विचारात्मक पक्ष है और अमूर्त है, जबकि शिक्षा क्रियात्मक पक्ष है, और उसका मूर्त प्रत्यक्षीकरण हैं। दर्शन को शिक्षा प्रत्यक्ष करती है तो दर्शन शिक्षा को आधार देता है। दर्शनशास्त्री सर्वदा शिक्षा शास्त्री होते हैं क्योंकि दर्शन को वे शिक्षा व्यवस्था सम्बंधी दृष्टिकोण में मूर्त रूप दे देते हैं। यही कारण है कि विश्व के सभी महान शिक्षाशास्त्री– महान दार्शनिक हुये हैं। दर्शन और शिक्षा की पारस्परिक निर्भरता को अनेक विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया है। कुछ विद्वानों के दृष्टिकोण निम्नलिखित है।

फिक्टे– ''दर्शन की सहायता के बिना शिक्षा के उद्‌देश्य कभी भी पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हो सकते है।''

जी0ई0पर्टिज– ''अत्यन्त गम्भीर अर्थ में, यह कहना बिल्कुल उचित है कि जिस प्रकार शिक्षा दर्शन पर आधारित है उसी प्रकार दर्शन शिक्षा पर आधारित है।''

दर्शन शिक्षा की अमूल्य सहायक के रूप में – बटलर महोदय के अनुसार दर्शन विस्तार में जगत की यथार्थता को समझने का प्रयत्न करता है। शिक्षा के क्षेत्र में इसके प्रयोग से ही विविध क्षेत्रों में नित नवीनता आती है, और निर्देशन और विधिता प्राप्त होती है। वास्तव में दर्शन में सूक्ष्म चिन्तन के लिये प्रयत्न तो शिक्षा में व्यवहार के लिये प्रयत्न होता है। दर्शन में क्यों का उत्तर मिलता है, जो कि शैक्षिक प्रक्रिया से सम्बंधित होते हैं। इसके फलस्वरूप शिक्षक जगत यर्थाथता को जानकर अनुभवों के सहारे बालकों को विकास करता है और दार्शनिक निर्णयों को प्रत्यक्ष करता है।

दर्शन शिक्षा के पूरक के रूप में– शिक्षा जीवन के सर्वांगीण विकास में सहायक है और दर्शन परिपक्व चिन्तन एवं स्पष्ट विचार से सम्बंधित होता है। शिक्षा की प्रक्रिया को सार्थक एवं उपयोगी बनाने हेतु दर्शन की अत्यन्त आवश्यकता होती है। अतः शिक्षा की प्रक्रिया एवं व्यवस्था निर्बाध गति से संचालित होने हेतु दर्शन का ही प्रश्रय लेती है। अगर हम देखें तो पायेंगे कि किसी भी समाज की शिक्षा प्रणाली किसी दर्शन के आधार को ही लेकर चलती है।

शिक्षा का विभिन्न अर्थो एवं कार्यों के रूपमें दर्शन के साथ सहसम्बंध– शिक्षा

मानव जीवन को आजीवन ज्ञान से पोषित करती है और उसे मानव महामानव बना देते हैं और इस कार्य में उसका साथ दर्शन देता है क्योंकि दर्शन ज्ञान की चरम सीमा है और मनुष्य के समक्ष क्या और क्यों को उपस्थित करता है। दर्शन का एक मात्र यथार्थ ज्ञान से सम्बंधित है जिसे आध्यात्मशास्त्र कहते हैं। इसका दूसरा भाग बताता है कि ज्ञान प्राप्त करने का मार्ग क्या है। यह मात्र ज्ञान शास्त्र कहलाता है। इस प्रकार शिक्षा और दर्शन दोनों सह सम्बंधित है।

अगर शिक्षा को परिस्थिति का अनुकूलन मान लिया जाये तब इस अनुकूलन की प्रक्रिया में व्यक्ति का व्यवहार महत्वपूर्ण है।

दूसरे विचार के अनुसार **शिक्षा मानसिक अनुशासन है**। स्मषति, कल्पना, तर्क, निर्णय, चिन्तन आदि मानसिक शक्तियां होती है। मानसिक शक्तियों पर नियंत्रण एवं विकास शिक्षा के द्वारा होता है। शिक्षा मानव की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास है और दर्शन भी मानसिक शक्तियों की उपज है और मन और आत्मा का विवेचन दर्शन करता है।

एक दूसरे कथन के अनुसार **शिक्षा को परिस्थितियों के साथ अनुकूलन** माना गया है। अनुकूलन क्षमता में व्यवहार महत्वपूर्ण होता है। व्यवहार का सम्बंध नीतिशास्त्र से है जो कि दर्शन का एक भाग है। फ्राबेल आध्यात्मवाद में विश्वास करता था और उसकी शिक्षा योजना में यह परिलक्षित होता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा अपने विविध अर्थों में भी दर्शन के साथ सह सम्बंध रखती है।

दर्शन शिक्षा का मार्गदर्शन– शिक्षा दर्शन का गत्यात्मक पहलु है शिक्षा उस रूप को प्रदर्शित करती है जो समाज का दर्शन होता है। दर्शन मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को अपना कार्य क्षेत्र मानता है। दर्शन इस ब्राह्मण्ड और उसमें मानव जीवन की व्याख्या करता है। इसमें मनुष्य जीवन के अन्तिम उद्देश्य और उस उद्देश्य की प्राप्ति के साध ान मार्गों पर भी विचार किया जाता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति का मार्ग में शिक्षा सहायक होती है। शिक्षा आचार–विचार में परिवर्तन कर समाज के दर्शन की ओर मनुष्य को उन्मुख करती है। दर्शन नित नये खोज करने के लिये मस्तिष्क को तैयार करता है। शिक्षा परीक्षण, चिन्तन और मनन शक्तियों का विकास करती है इस ज्ञान और कौशल के आधार पर हम दर्शन का पुनर्निमाण करते है। नया दर्शन नई शिक्षा को जन्म देता है और नई शिक्षा से नया दर्शन का जन्म होता है और यह चक्र सदैव चलता रहता है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

1. दर्शन का अध्ययन किन कारणों से होता है?

....

2. दर्शन और शिक्षा का सम्बंध कैसा प्रतीत होता है?

....

3. दर्शन व शिक्षा एक सिक्के के दो पहलू है। कैसे?

....

3.4 शिक्षा का दर्शन पर प्रभाव–

पूर्व में हम दर्शन एंव शिक्षा की अनन्योश्रितता को विभिन्न बिन्दुओं के अन्तर्गत समझ चुके है। यह भी स्पष्ट हो चुका है कि दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं अन्तः अब हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि शिक्षा कैसे दर्शन को प्रभावित करती है।शिक्षा मानव विकास की आधारशिला है। उचित शिक्षा के अभाव में मनुष्य दर्शन जैसे विषयों का विकास नहीं कर सकता है। दर्शन के निर्माण, विकास एवं कार्यान्वयन हेतु उचित शिक्षा का आधार आवश्यक है।

शिक्षा दर्शन के आधार के रूप में– शिक्षा की जन्मजात अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करती है, अन्तर्निहित शक्तियों में शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों का सामंजस्यपूर्ण विकास आता है। शिक्षा मानव को इस योग्य बनाती है वह निर्माण और विकास के लिये अवलोकन, चिन्तन और मनन कर सके। मानव मस्तिष्क अगर चैतन्य और विकसित न हो तो वह उसमें अन्तदृष्टि सृजित नहीं हो सकती है। शिक्षा के द्वारा हम भाषा सीखते हैं और विचारणा की शक्ति उत्पन्न होती है। इस प्रकार से यह स्पष्ट होता है कि प्लेटो के अनुसार शिक्षा का कार्य मनुष्य के शरीर और आत्मा को वह पूर्णता प्रदान करना है, जिसके कि वे योग्य हैं और दर्शन इस पूर्ण मन और आत्मा के नींव पर खड़ा होता है।

शिक्षा दर्शन को जीवन देती है– दार्शनिक सर्षष्टि–सष्टा, आत्मा–परमात्मा, जीव जड़ और जन्म तथा मष्त्यु आदि की व्याख्या करते हैं। उनके द्वारा निश्चित सिद्धान्तों से दर्शन विषय का विकास होता है। कोई भी समाज अपने पूर्वजों द्वारा निश्चित इन सिद्धान्तों को अपनी नयी पीढ़ी को शिक्षा प्रक्रिया के माध्यम से पहुँचाता है। शिक्षा इन सिद्धान्तों एवं विचारों को जीवित रखता है और दर्शन के ज्ञान को सुरक्षित रखती है।

शिक्षा दार्शनिक तत्वों को मूर्त रूप प्रदान करती है– दर्शन इस ब्राह्माण्ड और उसमें मानव जीवन की व्याख्या करता है, मनुष्य जीवन के उद्देश्य निश्चित करता है, और यह स्पष्ट करता है कि इन उद्देश्यों को प्राप्ति कैसे की जा सकती है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम दर्शन के निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं। शिक्षा दर्शन के तत्वों को मूर्त रूप प्रस्तुत करती है। जैसे कि प्राचीन कालीन में आदर्शवाद एवं अध

यात्मवाद भारतीय समाज का दर्शन था और यह शिक्षा व्यवस्था में परिलक्षित हुया। जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति था और शिक्षा व्यवस्था को उस दर्शन एवं जीवन के अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उसी के अनुसार व्यवस्थित किया।

शिक्षा दर्शन हेतु नई समस्या को उत्पन्न करती है– शिक्षा के दो प्रधान पक्ष हैं – प्रथम चिन्तन प्क्ष और द्वितीय व्यवहार पक्ष। अनुभव अथवा व्यवहार करते समय अनेक समस्यायें हमारे सम्मुख उपस्थित होती हैं, इन समस्याओं पर चिन्तन करके उनके आधार पर सिद्धान्तों का निरूपण दर्शन करता है। शिक्षा दर्शन के लिये समय, काल, परिस्थिति के अनुसार अनेक अन सलुझे प्रश्न उत्पन्न करती है। शिक्षा सदैव, क्यों, किसको, कैसे, किसलिये, कौन जैसे प्रश्नों से जूझती रहती हैं, और दर्शनशास्त्रियों के समक्ष एक समस्या उत्पन्न करती है कि वे सब ज्वलंत समस्याओं पर चिन्तन, मनन और मंथन करें।

शिक्षा दर्शन को गतिशीलता देती है– शिक्षा हममें निरीक्षण और चिन्तन शक्ति का विकास करती है और जीवन की नयी–नयी समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाती है और दार्शनिक इन नई समस्याओं का दार्शनिक हल ढूंढते है। इस समस्या समाधान की क्रिया में नई दार्शनिक सिद्धान्तों का निर्माण होता है। यह सब ज्ञान दर्शन अथवा दर्शनशास्त्र विषय का अंग बनता जाता है। ज्ञान को अन्य शाखाओं की भांति दर्शन भी उन सिद्धान्तों का त्याग करता है जो असत्य एवं भ्रमपूर्ण प्रतीत होते हैं और उन सिद्धान्तों को अपनाता है जिसके आधार पर जीवन जगत की व्याख्या की जा सकती है। यही उसकी गतिशीलता है। शिक्षा दर्शन के विकास को आधार प्रदान करती है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

4. शिक्षा दर्शन को जीवन देती है। कैसे?

   ....

5. शिक्षा दर्शन को आधार देती है। समझाइये।

   ....

6. शिक्षा दर्शन को कैसे गतिशील करती है?

   ....

3.5 शिक्षा के लिये दर्शन की उपयोगिता

बटलर का कथन है– ''दर्शन शिक्षा के प्रयोगों के लिये पथ–प्रदर्शक है।''

शिक्षा– अनुसंधान के क्षेत्र के रूप में दार्शनिक निर्णय के लिये निश्चित सामग्री को आधार के रूप में प्रदान करती है। दर्शन शिक्षा का विचारात्मक पक्ष है और अति आवश्यक है, क्योंकि जीवन के लिये शिक्षा की आवश्यकता है। अतः दर्शन की उपयोगिता शिक्षा हेतु सर्वमान्य है। दर्शन द्वारा शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, विद्यालय संगठन, अनुशासन आदि को एक निश्चित रूप प्रदान किया जाता है। किसी समाज की शिक्षा मुख्य रूप से उस समाज के दार्शनिक चिन्तन, उसकी संरचना, राजनीतिक व्यवस्था,आर्थिक व्स्था और मनोवैज्ञानिक तथ्यों तथा वैज्ञानिक प्रगति पर आधारित होती है। रस्क ने स्पष्ट किया है कि– ''शैक्षिक समस्या के प्रत्येक दषष्टिकोण से शिक्षा के दार्शनिक आधार की मॉग उठती है। इसीलिये जीवन दर्शन और शिक्षा दर्शन से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है।'' दर्शन के तत्व मीमांसा से शिक्षा के उद्देश्य, ज्ञान मीमांसा से पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियां और आचार मीमांसा से शिक्षक शिक्षार्थी सम्बंधा कर्तव्य और अनुशासन का स्वरूप निश्चित होता है। शिक्षा के विभिन्न अंगो पर दर्शन की उपयोगिता हम बिन्दुवार समझेंगे–

- **दर्शन शिक्षा का सम्प्रत्यय–** दर्शन 'शिक्षा क्या है' इसे स्पष्ट करता है। व्यक्ति विशेष एवं समाज विशेष का दर्शन शिक्षा में उसके स्वरूप को परिलक्षित करने का प्रयास किया जाता है। दर्शन शिक्षा के सही सम्प्रत्यय का ज्ञान देता है, क्योंकि दर्शन शिक्षा के स्वरूष्ध की व्याख्या करता है।
- **दर्शन और शिक्षा के उद्देश्य** – दर्शन से हमें जीवन के मूल्यों का ज्ञान कराता है और शिक्षा के द्वारा इन मूल्यों की प्राप्ति होती। जीवन के उद्देश्य भी दर्शन की सहायता के निश्चित होते और शिक्षा के उद्देश्य भी दर्शन की सहायता से निर्धारित होते हैं। दर्शन का सर्वप्रथम भाग तत्व मीमांसा होता है और सषष्टि–सष्टा, आत्मा और परमात्मा जीव–जगत और जन्म–मष्त्यु आदि की व्याख्या होती है, और इसके आधार पर मानव जीवन के उद्देश्य निर्धारित होते हैं और शिक्षा के द्वारा इन उद्देश्यों की प्राप्ति होती है। उदाहरणार्थ भारत में वैदिक युग में धर्म मोक्ष की प्राप्ति जीवन के उद्देश्य रखे गये और इसी के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य भी निर्धारित हुये। जिससे कि शैक्षिक प्रयत्न सफल हो। शिक्षा के उद्देश्य दर्शन के द्वारा ही निर्धारित होते हैं इसकी पुष्टि नन महोदय के कथन से होती है–''शिक्षा की प्रत्येक योजना अन्ततोगत्वा व्यावहारिक दर्शन है और जीवन के प्रत्येक बिन्दु को अवश्य छूती है।'' अस्तु शिक्षा का कोई भी उद्देश्य जो निश्चित निर्देशन दे वे इतने ठोस है कि वे जीवन के आदर्शों के साथ सहसम्बंध रखते हैं और चूँकि जीवन के आदर्श भिन्न होते हैं, इसीलिये इनकी भिन्नता शैक्षिक सिद्धान्त में परिलक्षित होती है।
- **दर्शन और शिक्षा का पाठ्यक्रम–** शिक्षा में पाठ्यक्रम शिक्षा प्रक्रिया की तीसरी धुरी है। पाठ्यक्रम शिक्षा के मार्ग का पथ प्रदर्शक भी है। शिक्षा को

व्यवहारिक केवल दार्शनिक ही बना सकता है और सही मार्ग दर्शन ही दिखाता है। दर्शन का दूसरा भाग ज्ञान मीमांसा होता है। इसमें ज्ञान के स्वरूप की व्याख्या की जाती है और इसके आधार पर शिक्षा की पाठ्यचर्या में उसी ज्ञान को समावेशित किया जाता है जिसे मानव के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन के लिये आवश्यक समझते है। ऐतिहासिक तथ्य भी इस बात का समर्थन करते हैं कि शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर पाठ्यचर्या का निर्धारण किया जाता है। पाठ्यचर्या का वर्गीकरण दर्शन के अनुसार ही होता है। प्रयोगवादी विचारधारा के अनुसार बालकों को वर्तमान एवं भविष्य के लिये उपयोगी विषय पढ़ाये जायें। प्रकृतिवादी विचारधारा के अनुसार पाठ्यक्रम बालक की रूचि, प्रकृति, अध्ययन स्वास्थ्य रक्षा (भूगोल, इतिहास, भाषा, खेल–कूद) तथा अन्य क्रियायें पाठ्यक्रम में रखी जायें।

- **दर्शन और शिक्षण विधियॉ–** शिक्षा के प्रत्येक पक्ष एक दूसरे से जुड़े एवं पूरक हैं, और शिक्षा और दर्शन एक दूसरे के पूरक है। दर्शन की ज्ञान मीमांसा में मानव बुद्धि ज्ञान और ज्ञान को प्राप्त करने की विधियों की व्याख्या होती है। इसी के आधार पर दार्शनिक शिक्षण विधियों का विधान करते हैं। इससे स्पष्ट है कि शिक्षण विधियां दार्शनिक आधार लिये हुये होती है। इसी कारण किलपैट्रिक महोदय ने शिक्षा विधि का दर्शन खोज निकाला और प्रचलन किया। विधि से तात्पर्य उस क्रिया से है जिसके द्वारा छात्र तथा विषय सामग्री के बीच सम्बंध स्थापित और उपस्थित होता है और उचित दषष्टिकोण के विकास के साथ शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति होती है। दर्शन के आधार के बिना शिक्षा विधि अप्रभावकारी हो जाता है। दर्शन एक प्रकार से तर्क एवं आलोचना करता है जिसके फलस्वरूप शिक्षा विधियों के गुण दोष स्पष्ट हो जाते हैं। पद्धतियों की व्यावहारिकता, रचनात्मकता, विध्वंसात्मकता आदि गुण–दोष इस ढंग से पता करते हैं। उदाहरणार्थ प्रकषतिवादी रूसो नें निषेधात्मक शिक्षा की पद्धति निकाली। माण्टेसरी ने इन्द्रिय यथार्थवाद के आधार पर इन्द्रिय प्रशिक्षण पर बल दिया।
- **दर्शन और शिक्षक तथा शिक्षार्थी–** दर्शन के तत्वस्वरूप मीमांसा में मनुष्य के स्वरूप और आचार मीमांसा में करणीय तथा अकरणीय कर्मो की विषद व्याख्या की जाती है। दर्शन के इसी व्याख्या के अनुसार शिक्षक और शिक्षार्थी के गुण व्यक्तित्व एवं आचार विचार एवं कर्तव्यों का निर्धारण होता है। दर्शन की सहायता से शिक्षक का ज्ञान विस्तष्त एवं परिपक्व हो जाता है और तद्नुसार उच्च कोटि के शिक्षक सुलभ गुणों का विकास होते हैं। प्रत्येक दर्शन के अनुसार शिक्षक के कुछ न कुछ चारित्रिक एवं व्यावसायिक मूल्य वांछनीय है। आदर्शवादी विचारधारा शिक्षक की उत्तम चरित्र एवं सर्वोपरि मानती हैं तो

प्रकषतिवादी शिक्षक का कार्य पर्दे के पीछे से मार्गदर्शन करना मानते हैं। अध्यापक का दार्शनिक प्रभाव बालक पर भी पड़ता है अतः शिक्षक का स्वमेंव एक दर्शन होना चाहिये।

- **शिक्षा संस्थान तथा दर्शन–** शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षा की संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परिवार विद्यालय समुदाय, राष्ट्र आदि सभी शिक्षा की संस्थायें है, अतः इन सब के लिये भी दर्शन की उपयोगिता है। समाज अपनी शिक्षा, अपने अनुभव तथा अपनी परिस्थितियों के अनुसार स्वयं अपना दर्शन निश्चय करते हैं। इस निश्चित दर्शन का प्रभाव शिक्षा पर पड़ता है। दर्शन शिक्षा संस्थानों की स्थापना एवं संचालन में सहयोग करता है क्योंकि यह अमूर्त विचारधारा मूर्त उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास करवाता है। हमारे देश में शान्तिनिकेतन एवं गुरूकुल आदर्शवाद एवं प्रकृतिवाद के विचारधारा से ओतप्रोत है तो बहुद्देशीय विद्यालय भौतिक वर्ष विचारधारा से प्रेरित है।
- **दर्शन और अनुशासन–** दर्शन इस प्रश्न का उत्तर देता है कि दण्ड क्यों और कैसे? दर्शन का तीसरा प्रमुख भाग होता है– आचार मीमांसा। इसमें मनुष्य को क्या कर्म करना चाहिये क्या नहीं इसकी विशद व्याख्या होती है। इसके आधार पर ही शिक्षा व्यवस्था में अनुशासन का सम्प्रत्यय निश्चित किया जाता है। दर्शन नैतिकता को विकसित करता है और नैतिकता अनुशासन को। मैकनन ने अनुशासन को स्थापित करने हेतु तीन प्रकारों में विभाजित किया है जिसमें दमन, प्रभाव और मुक्ति को आधार बनाया है। इन तीनों प्रकार के अनुशासन की जॉच दर्शन करता है और समय काल परिस्थिति के अनुसार कौन सर्वोत्तम होगा यह स्पष्ट करता है।
- **दर्शन और शिक्षा की अन्य समस्याये–** दर्शन शिक्षा की अन्य समस्यायें जैसे जन शिक्षा, स्त्री शिक्षा और राज्य हस्तक्षेप आदि पर भी विचार करता है। इसके अतिरिक्त दार्शनिक सिद्धान्तों की उपयोगिता सर्वदा रही है जैसे कि शिक्षा के समान अवसर अगर राष्ट्रीय लक्ष्य है तो क्यों? समान अवसर क्यों दिये जाये और कैसे दिये जायें। इसके लिये दार्शनिक विचार आधार प्रदान करते हैं कि हम इन समस्याओं को कैसे सुलझाय, इसका मार्ग दिखाता हैं।
- **दर्शन एवं शिक्षा में मूल्यांकन–** शिक्षा में मूल्यांकन एक महत्वपूर्ण अंग है और मूल्यांकन पर दर्शन की छाप प्रतीत होता है। इसे आरम्भ करने का श्रेय मेक–काल को है जिन्होनें अपनी रचना मेजरमेन्ट में प्रथम अध्याय को ''मापन का दर्शन'' नाम दिया है। इसके पश्चात् लिंडक्विस्ट ने भी घोषित किया है कि यदि शैक्षिक मापन को अधिक महत्वपूर्ण कार्य करना है तो परीक्षकों को केवल तकनीकी नहीं वरन् दार्शनिक भी होना चाहिये क्योंकि तभी उनका कार्य प्रभावकारी होगा। मापन की क्रिया सौद्देश्यपूर्ण हो इसके लिये दर्शन की आवश्यकता होती है।

निष्कर्षतः शिक्षा और दर्शन का घनिष्ठ और अटूट सम्बंध आज से नहीं परन्तु युग युगान्तर से है दर्शन एक प्रकार से शिक्षा का मूलाधार है। बटलर महोदय ने स्पष्ट किया है कि दर्शन एक प्रकार से शिक्षा का मूलाधार कहा जा सकता है। शिक्षा अन्वेषण के एक क्षेत्र के रूप में दार्शनिक निर्णयों के लिये निश्चित प्रदत्तों को आधार स्वरूप देती है और दर्शन पथ–प्रदर्शन एवं निर्णय देता है।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क. नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख. इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिये।

7. शिक्षा के उद्देश्य निर्धारण में दर्शन की भूमिका क्या है?

....

8. दर्शन के बिना शिक्षण की कला को पूर्णता प्राप्त करना असम्भव है, क्यों?

....

3.6 सारांश

इस सम्पूर्ण इकाई में आपने दर्शन एंव शिक्षा के सम्बंध के विषय में विस्तार से अध्ययन किया है। इस अध्ययन से हमें यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि दर्शन शिक्षा के लिये परमावश्यक है क्योंकि जीवन के लिये दर्शन की आवश्यकता हैं दर्शन शिक्षा एवं शिक्षा दर्शन का प्रमुख आधार है। दर्शन शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, विद्यालय संगठन, अनुशासन एवं मूल्यांकन प्रक्रिया को एक निश्चित प्रभावी रूप प्रदान करता है। अतः शिक्षा योजना को सफल बनाने के लिये दर्शन परमावश्यक है। शैक्षिक दृष्टिकोण से दर्शन अध्ययन परमावश्यक है, क्योंकि इसके द्वारा शिक्षा का पथ प्रदर्शन किया जाता है और शिक्षा के व्यवहार क्षेत्र में दर्शन निर्णय देता है।

3.7 अभ्यास कार्य

1 शिक्षा और दर्शन का पारस्परिक सम्बंध किस प्रकार का होता है? विस्तार से बताइये।

2 शिक्षा में दर्शन की क्या उपयोगिता है? स्पष्ट कीजिये।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर–

1. सम्यक ज्ञान प्राप्ति के लिये–
2. दर्शन और शिक्षा एक–दूसरे के पूरक हैं, एक–दूसरे के बिना अपूर्ण दर्शन विचारात्मक पक्ष और शिक्षा क्रियात्मक पक्ष।

3. शिक्षा दर्शन का गतिशील पहलू हे। यह दार्शनिक विश्वास का सक्रिय पक्ष और जीवन के आदर्शों का प्राप्त करने का व्यावहारिक साधन है।

4. समाज अपने संस्कृति एवं पूर्वजों द्वारा निश्चित इन सिद्धान्तों को अपनी नयी पीढ़ी को शिक्षा प्रक्रिया के माध्यम से पहुँचाता है। शिक्षा दार्शनिक सिद्धान्तों एवं विचारों को सुरक्षित रख जीवन देती है।

5. शिक्षा मानव के मानसिक एवं शारीरिक विकास कर इस योग्य बनाती है कि विचारणा शक्ति का उत्थान हो जाये और दर्शन को आधार देती है।

6. शिक्षा दर्शन को नित नयी समस्यायें एवं चिन्तन योग्य आयाम प्रदान कर सदैव सक्रिय रखती है।

7. दर्शन के द्वारा जीवन के मूल्यों का ज्ञान और शिक्षा के द्वारा इन मूल्यों की प्राप्ति होती है। शिक्षा का परम उद्देश्य व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास है अतः दर्शन शिक्षा को उद्देश्य निर्धारण करने में सहायता देता है जिससे कि शैक्षिक प्रयत्न सोद्देश्य हों।

8. शैक्षिक उद्देश्य और विधियां दार्शनिक सिद्धान्तों के सहसम्बंधी हैं, शिक्षा की विधियां दार्शनिक आधार लिये रहती है। दर्शन का आधार न होने से शिक्षा विधि अप्रभावकारी हो जाती है क्योंकि ऐसी स्थिति में विद्यार्थी आदर्शों तथा पठित सामग्री के बीच सम्बंध स्थापित नहीं कर पाता है।

3.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

रस्क आर0आर0(1972) : *शिक्षा के दार्शनिक आधार,* जयपुर हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

Saiyidain K.G.(1966) : *The Humanist Tradition in Indian Educational Thought,* Bombay: Asia Publicity House.

Brubacher J.S.(1962) : *Modern Philosophies of Education*, New Yark, Mc-Graw Hill Book Company

चतुर्वेदी एस0आर0(1970) : *शिक्षा दर्शन*, हिन्दी समिति सूचना विभाग,लखनऊ

RadhaKrishnan R.(1927): *Indian Philosophy*, Volume I & II London George Allen & Unwin Ltd.

Adme J : *Educational Theories*, London Ernest Benn.

ओड एल0के0(2005) : *शिक्षा की दार्शनिक पष्ठभूमि*, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

इकाई– 4 शिक्षा दर्शन का स्वरूप एवं आवश्यकता

संरचना–

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 शिक्षा दर्शन का सम्प्रत्यय
4.4 शिक्षा दर्शन का स्वरूप
4.5 शिक्षा दर्शन की व्याप्ति
4.6 शिक्षा दर्शन की आवश्यकता
4.7 सारांश
4.8 अभ्यास कार्य
4.9 बोध प्रश्न
4.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाईयों में आपने शिक्षा और दर्शन के सम्प्रत्यय स्वरूप तथा दोनों के मध्य सम्बंध के विषय में अध्ययन किया है। इस इकाई में हम शिक्षा दर्शन के विषय में अध्ययन करेंगे। शिक्षा और दर्शन का सम्बंध एक पक्षीय न होकर दोनों ओर से है। दर्शन शिक्षा के लिये क्या करता है। इस इकाई में हम यह अध्ययन करेंगे कि शिक्षा दर्शन क्या है, इसका विषय क्षेत्र एवं स्वरूप क्या है तथा यह शिक्षा के लिये क्या भूमिका निभाता है। दर्शन के विभिन्न अंग शिक्षा के विभिन्न पक्षों से गुंथे हुए हैं। यह सत्य है कि दर्शन शिक्षा के विभिन्न पक्षों को प्रभावित करता है और इस प्रकार जो समाहोरात्मक स्वरूप उभरता है, उसी को शिक्षा दर्शन की संज्ञा दी जाती है, जो न केवल शैक्षिक दर्शन है न शिक्षा का दर्शन है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

- शिक्षा दर्शन के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षा दर्शन के स्वरूप का वर्णन कर सकेंगे।
- शिक्षा दर्शन का विषय क्षेत्र बना सकेंगे।
- शिक्षा दर्शन की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 शिक्षा दर्शन

शिक्षा का कुछ अंश विज्ञान है और कुछ दर्शन। दुर्भाग्यवश इसका वह पक्ष अभी तक उपेक्षित है जो दर्शन की सीमा में आता है इसीलिये शिक्षा के दार्शनिक

आधार का विवेचन महत्वपूर्ण है। इस आधार के विश्लेषण से शिक्षा में स्पष्टता आती है और शैक्षिक क्रियायें सोद्देश्य हो जाती है। किसी भी देश की शिक्षा उस समाज के दार्शनिक चिन्तन तथा उसकी संरचना, राजनैतिक व्यवस्था, आर्थिक व्यवस्था, और वैज्ञानिक प्रगति पर आधारित होती है। अब किसी समाज की शिक्षा पर दर्शन का सबसे अधिक प्रभाव होता है अतः दर्शन की महत्ता को ठुकराया नहीं जा सकता है।

शैक्षिक दर्शन एवं शिक्षा का दर्शन– शिक्षा दर्शन की व्याख्या करने में दो शब्द सम्मुचयों का प्रयोग होता है। शैक्षिक दर्शन के अनुसार दर्शन जीवन के विभिन्न पक्षों को स्पर्श करता है और जीवन का महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षा हे जो कि दर्शन से प्रभावित होती है जैसा कि हम पढ़ चुके हैं इस मान्यता के अनुसार दार्शनिक सिद्धान्तों एवं मान्यताओं का शिक्षा के लिये जो अभिप्रेतार्थ निकलता है उसका विवेचन किया जाता है। अर्थात् शैक्षिक दर्शन, दर्शन शास्त्र का अनुप्रयुक्त शाखा है। इसके अनुसार हम यह मान सकते हैं कि व्याख्याता के मुख्य बिन्दु दर्शन ही होता है तथा विचारार्थ बिन्दु शिक्षा के विभिन्न अंग जैसे पाठ्यक्रम, अनुशासन, छात्र आदि होते हैं। दूसरा दृष्टिकोण जान डी0वी0 का है उनके अनुसार– ''शिक्षा का अपना स्वतंत्र दर्शन होता है जिसे हम शिक्षा का दर्शन शास्त्र कहते हैं।'' वस्तुतः शिक्षा के दर्शन शास्त्र का उद्भव शिक्षा की ज्वलंत समस्याओं से हुआ। शिक्षा से उद्भूत समस्याओं पर विचार करना दर्शनशास्त्र का काम है न कि दार्शनिक सिद्धान्तों का शिक्षा के लिये अभिप्रेतार्थ निकालना । डी0वी0 के अनुसार– छात्र संकल्पना शिक्षा के अवसरों की समानता, शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम आदि सभी शिक्षा के ऐसे प्रश्न है जिन पर विभिन्न मत है। वास्तव में ये मत एवं तर्क ही शिक्षा दर्शन का क्षेत्र हैं।

शिक्षा दर्शन का अर्थ एवं सम्प्रत्यय– साधारण अर्थ में शिक्षा पद्धति दर्शन की ही एक शाखा होती है जिसमें दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रयोग शिक्षा के सम्बंध में होता है। शिक्षा दर्शन शिक्षा से सम्बंधित विचारों पर विचार करता है और उनके समाधान के लिये दार्शनिक अर्थात् चिन्तनपूर्ण एवं निर्णयात्मक दृष्टि से प्रयत्न करता है। कनिंघम महोदय ने शिक्षा दर्शन एवं दर्शन को साथ–साथ रखकर विचार प्रकट किया है। उनका कथन है कि शुद्ध दर्शन की परिभाषा से हम शिक्षा दर्शन की परिभाषा को समझ सकते हैं। प्रथम दर्शन सभी वस्तुओं का विज्ञान है। इसीलिये शिक्षा दर्शन शिक्षा की समस्याओं को मुख्य बिन्दुओं से देखता है।

कुछ विचारकों के अनुसार– दर्शन ने मौलिक सिद्धान्तों की खोज होती है औन उन सिद्धान्तों को शिक्षा में व्यवहष्त किया जाता है। इस प्रकार शिक्षा दर्शन में दार्शनिक सिद्धान्तों का शिक्षा के क्षेत्र में व्यवहार किस प्रकार होता है और होना चाहिये इसे बताया जाता है।

कुछ विचारक शिक्षा को ही मुख्य मानते हैं– और उनके अनुसार दर्शन तो

शिक्षा का सामान्य सिद्धान्त है। कुछ विचारक यह मानते हैं कि ''दर्शन सभी वस्तुओं को उनके अन्तिम तर्कों एवं कारणों के जरिये जानने का विज्ञान है।'' हेन्डरसन महोदय के शब्दों में– ''शिक्षा दर्शन, शिक्षा की समस्याओं के अध्ययन में दर्शन का प्रयोग है।''

इस परिभाषा में पूर्णता नहीं है। हमारी दृष्टि में शिक्षा दर्शन को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

''शिक्षा दर्शन शिक्षाशास्त्र की वह शाखा है जिसमें शिक्षा के सम्प्रत्ययों , उद्देश्यों, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों एवं शिक्षा सम्बंधी अन्य समस्याओं के संदर्भ में विभिन्न दार्शनिकों एवं दार्शनिक सम्प्रदायों के विचारों का आलोचनात्मक अध्ययन किया जाता है।''

अतः शिक्षा दर्शन शिक्षा के क्षेत्र में गहनतम समस्याओं का सम्पूर्ण रूप से अध्ययन करता है और विज्ञान के लिये उन समस्याओं को छोड़ देता है, जो तात्कालिक है और वैज्ञानिक विधि से सर्वोत्तम ढंग से अध्ययन किया जा सकता है। शिक्षा की प्रक्रिया के लिये आवश्यक संकेतों एंव साधनों को शिक्षा दर्शन एक निश्चित रूप भी प्रदान करता है और शिक्षा प्रक्रिया के अंगो को निर्धारित भी करता है।

बोध प्रश्न

निर्देश–

क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. शैक्षिक दर्शन क्या है?

   ....

2. शिक्षा दर्शन का क्या अर्थ है?

   ....

4.4 शिक्षा दर्शन का स्वरूप

शिक्षा दर्शन को मुख्यतः शिक्षा एवं दर्शन दोनों के योग के रूप में देखा जाता है। शिक्षा दर्शन शिक्षा की एक शाखा के रूप में है। इसमें शिक्षा प्रमुख है और दर्शन तो शिक्षा का सामान्य सिद्धान्त ही है। इसमें दर्शन का वास्तविक कार्य शिक्षा की समस्याओं को ढूढना है। इस युक्ति से तो सम्पूर्ण दर्शन ही शिक्षा दर्शन है। जॉन डी0वी0 ने स्पष्ट किया है कि ''शिक्षा दर्शन में तो तत्कालीन सामाजिक जीवन की कठिनाइयों के प्रति उचित दृष्टिकोण बनाने की समस्या का स्पष्टीकरण होता है अतः शिक्षा दर्शन को बाह्य सिद्धान्तों का व्यवहृत रूप नहीं समझना चाहिये। उनके अनुसार दर्शन स्वयं ही शिक्षा का सिद्धान्तीकरण है।'' शिक्षा दर्शन कुछ विचारकों के अनुसार

एक नया क्षेत्र है जिमसें शैक्षिक समस्याओं पर दाशर्निक दृष्टिकोण से विचार किया जाता है।

शिक्षा दर्शन के स्वरूप पर चार दृष्टिकोण प्रचलित है–

- दर्शन के अंग स्वरूप
- शिक्षाशास्त्र के अंग स्वरूप
- शिक्षा में दर्शन के प्रयोग स्वरूप
- स्वयमेव एक स्वतंत्र विषय स्वरूप

दर्शन के अंग स्वरूप– शिक्षा दर्शन वास्तव में दर्शन होता है, क्योंकि उसमें भी अन्तिम सत्यों, मूल्यों, आदर्शों, आत्मा–परमात्मा, जीव, मनुष्य, संसार, प्रकृति आदि पर चिन्तन एवं उसके स्वरूप को जानने का प्रयत्न होता है, अतएव यह दर्शन एक अभिन्न अंग ही होता है और प्रारम्भिक शिक्षा दार्शनिक दर्शन पर ही बल देते रहे। कुछ विचारकों ने शिक्षा दर्शन को अंग स्वरूप ही माना है।

शिक्षाशास्त्र के अंग स्वरूप– शिक्षाशास्त्र के विकास करने वाले शिक्षाशास्त्रियों ने इस दषष्टिकोण को अपनाया है। शिक्षाशास्त्र के चार आधार स्तम्भ है जिसमें एक शिक्षा दर्शन भी है। ऐसी परिस्थिति में शिक्षा दर्शन शिक्षा शास्त्र का अभिन्न अंग बना है।

स्वमेव एक स्वतंत्र विषय स्वरूप– आधुनिक शिक्षा दर्शन ने एक स्वतंत्र विषय का रूप ले लिया। इसमें शिक्षा को दार्शनिक दृष्टिकोण से अध्ययन कियाजाता है, अर्थात् शिक्षा को अन्तिम परिभाषा, सर्वमान्य उद्देश्य, पाठ्यक्रम एवं चिन्तन आधारित शिक्षा विधियों का निर्माण होता है, यही दर्शन शिक्षा के नाम से पुकारा जाता है जो केवल शिक्षाशास्त्र नहीं केवल दर्शनशास्त्र नहीं परन्तु नव–निर्मित विषय शिक्षा दर्शन हो जाता है। इस विचार से दर्शन के विभिन्न अंग (ज्ञान दर्शन, मूल्य दर्शन, नीति दर्शन, सौन्दर्य दर्शन आदि) के समान ही शिक्षा दर्शन के भी विभिन्न अंग निश्चित किये जाते हैं। इसमें अंतिम, शाश्वत एवं सूक्ष्म, ज्ञान, तर्क, नैतिकता, सौन्दर्यानुभूति आदि का अध्ययन शिक्षा के रूप, उद्देश्य, मूल्य, आदर्श, विधि, भावनात्मक दृष्टिकोण आदि प्रसंग में होता है।

शिक्षा में दर्शन के प्रयोग स्वरूप– शिक्षा दर्शन का यह स्वरूप एक प्रकार का साधन स्वरूप होता है वास्तव में यह स्वरूप एक और दर्शन का अंग है तो दूसरी ओर शिक्षा का एक साधन है। इसमें इसके साधन एवं प्रयोग तत्व पर बल दिया जाता है। इसका तात्पर्य यह होता है कि शिक्षा के अध्ययन में दर्शन के सिद्धान्त एवं अंग–प्रत्यंग सहायता देते हैं तभी शिक्षा की प्रक्रिया पूरी होती है। यदि दर्शन का प्रयोग न हो तो शिक्षा की निर्णयात्मक स्थिति नहीं होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी–

क– नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

3. दर्शन शिक्षा के लिये क्या है?

....

4 शिक्षा में दर्शन का प्रयोग किसलिये होता है?

....

4.5 शिक्षा दर्शन की व्याप्ति

शिक्षा दर्शन शिक्षा की सभी पहलुओं पर विचार करता है। सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का विश्लेषण करने पर निम्नांकित प्रश्न उभरते हैं और दर्शन के क्षेत्र बन जाते हैं।

- शिक्षा क्यों दी जानी चाहिये? शिक्षा के द्वारा हम क्या उपलब्धि चाहते हैं?
- शिक्षा किसे दी जानी चाहिये? शिक्षा प्राप्त करने का अधिकारी कौन है? क्या शिक्षा सार्वजनिक होनी चाहिये अथवा योग्य को दी जाये?
- शिक्षा प्राप्त करने वाले की प्रकषति क्या हो? कौन शिक्षा पाने के योग्य है? शिक्षक अथवा शिक्षार्थी के मध्य कैसे सम्बंध होने चाहिये?
- शिक्षक के क्या गुण, योग्यतायें एवं क्षमतायें होनी चाहिये? तथा उसे शिक्षा के दायित्व का किस प्रकार निर्वाह करना चाहिये?
- सीखने या सिखाने योग्य क्या सामग्री है? ज्ञान से हमार क्या आशय है? किस प्रकार का ज्ञान ग्राह्य है? ज्ञान के अतिरिक्त किस अभिक्षमता योग्यता एवं आदतों का विकास किया जाना चाहिये?
- अध्ययन अध्यापन किस प्रकार किया जाये, जिससे कि सुविधापूर्वक वांछित ज्ञान, योग्यतायें एवं क्षमतायें अर्जित की जा सके?
- अध्ययन (शिक्षण) सामग्री का स्वरूप कैसा हो? इसे किस प्रकार से प्रस्तुत किया जाये? अध्ययनीय सामग्री को कैसा बनाया जाये कि वह समुग्राह्य हो?
- शिक्षण अधिगम के उचित वातावरण का सष्जन कैसे हो पायेगा? उचित वातावरण के गुण क्या होंगे? अर्जित ज्ञान का प्रशिक्षण कैसे किया जाये?
- अनुशासन से क्या अभिप्राय है? विद्यालय अनुशासन कैसा हो? विद्यार्थियों को अनुशासित कैसे रखा जाये?
- विद्यालय में संसाधन कैसे प्रबंध किये जाये? प्रशासन प्रबंधन कैसे करें। कौन सा प्रबंधन प्रभावशाली होता है? प्रशासन एवं अध्यापक के मध्य कैसा सम्बंध

हो? अध्यापको एवं विद्यालय के अन्य मानवीय संसाधनों के मध्य कार्य वितरण कैसे किया जाये।

उपरोक्त सभी प्रश्न मूलतः प्रथम पॉच प्रश्नों से सम्बद्ध है और प्रथम प्रश्न पूर्णतया दर्शन का प्रश्न है, परन्तु शेष प्रश्न भी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से दर्शन की परिधि में आ जाते हैं। शिक्षा विधियों पर मुख्यतः शिक्षा विज्ञान पर विचार होता है और शिक्षा विज्ञान भी शिक्षा दर्शन से प्रभावित होता है। प्रारम्भ मे ंविज्ञान दर्शन का ही एक भाग था और ज्ञान की सभी शाखायें दर्शन ही थीं। बाढ़ में थेल्स पश्चिमी दर्शन के जन्मदाता ने सर्वप्रथम वैज्ञानिक पद्धति अपनायी परन्तु अरस्तु उच्च कोटि का दार्शनिक था पर विज्ञान का जन्मदाता माना जाता है, और धीरे–धीरे गणित एवं अन्य विज्ञान की शाखाओं ने अपना पृथक अस्तित्व बना लिया। परन्तु सभी विज्ञानों को गणित का प्रश्रय लेना पड़ता है। सभी विज्ञान गणित की निश्चितता का आश्रय लेते हैं, और पदार्थों के सम्बंधों को भी अन्ततः देखने का प्रयत्न करते हैं। गणित दर्शन की मनन पद्धति पर आधारित है और गणित भी अन्ततः दर्शन का आश्रय लेते हैं इसीलिये दर्शन को विद्वानों का विज्ञान कहा गया। दर्शन को विचार एवं समस्यायें शिक्षा प्रक्रिया में मिलते हैं और शिक्षा दर्शन की उत्पत्ति होती है।

बोध प्रश्न

निर्देश–

क– क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

5 शिक्षा दर्शन का मुख्यतः विषय क्षेत्र क्या है?

....

....

....

5.1 शिक्षा दर्शन की आवश्यकता

जीवन और शिक्षा में तादात्म्य है तो जीवन दर्शन और दर्शन तथा शिक्षा दर्शन में भी वही सम्बंध है। दर्शन इसी कारण शिक्षा का एक प्रमुख आधार है। शिक्षा दर्शन की आवश्यकता शिक्षा को अपनी पूर्ण व्यवस्था निर्धारण में पड़ती है।

- **ब्रह्माण्ड और उसमें जीवन के प्रति विभिन्न दृष्टिकोण का ज्ञान–** दर्शन हमें इस ब्रह्माण्ड और उसमें मानव जीवन के रहस्य से अवगत कराता है जो रहस्य शेष रह जाता है उसे समझने के लिये अन्तदृष्टि प्रदान करता है। बिना पूर्व और वर्तमान को जाने कुछ भी सोचना गलत होता है अतः शिक्षा दर्शन

विभिन्न दर्शनों के मूल सिद्धान्तों की व्याख्या करता हैं और हम इस ब्रह्माण्ड और उसमें मानव जीवन के प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों का ज्ञान प्राप्त करते हैं और सही दर्शन का चुनाव करते हैं जो हमारी संस्कषति की पोषक हो और वर्तमान परिस्थिति में समायोजन लायक क्षमता हममें विकसित कर सकें।

- **मानव जीवन के विभिन्न उद्देश्यों का ज्ञान एवं प्राप्त करने का उपाय–** शिक्षा दर्शन अध्यापक के लिये मार्ग प्रशस्त करता है कि वह जीवन के स्वरूप और अन्तिम उद्देश्यों का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सके। इस ज्ञान के आधार पर अपने स्वयं के अनुभव एवं तर्क पर वह अपना दृष्टिकोण बनाता है। जैसे कि भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखें तो आज भी शिक्षा का उद्देश्य निष्कलंक एवं पवित्र जीवन की प्राप्ति है जो कि आदर्शवादियों के दृष्टिकोण से मिलता है। शिक्षा दर्शन के अध्ययन से अध्यापक मानव जीवन के विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के उपायों का भी ज्ञान प्राप्त करता है और उस ज्ञान के आधार पर अपना मार्ग निर्धारण करता है।

- **शिक्षा के सम्प्रत्यय का ज्ञान–** शिक्षा का सम्प्रत्यय दर्शन का विषय क्षेत्र है। जिस दर्शन का इस ब्रह्माण्ड और उसमे ंमानव जीवन के प्रति जो दृष्टिकोण होता है उसी के अनुरूप– 'शिक्षा क्या है' निर्धारित किया जाता है। आदर्शवाद प्लेटो के अनुसार– ''शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है जो, अच्छी आदतों के द्वारा बच्चों में नैतिकता का विकास करती हैं।'' प्रकृतिवादी एडम्स के अनुसार– ''शिक्षा का सामान्य अर्थ उन सभी शिक्षा पद्धतियों से है जो विद्यालयों और पुस्तकों पर निर्भर न होकर, छात्र के वास्तविक जीवन के अध्ययन पर निर्भर रहती है।'' प्रयोजवादी जॉन रस्किन के अनुसार– ''शिक्षा वह प्रक्रिया है जो बच्चों को अच्छे स्थान प्राप्त करने, बड़े और धनी व्यक्तियों के समाज में महत्वपूर्ण स्थान पाने और आराम और ऐश्वर्य का जीवन जीने के लिये तैयार करती है।'' इस प्रकार से विंभिन्न दार्शनिकों ने अपने दर्शन के अनुरूप शिक्षा के सम्प्रत्यय को स्पष्ट किया।

- **उद्देश्य निर्धारण में–** दर्शन का प्रथम भाग तत्व मीमांसा होता है। रस्क का मत है कि शिक्षा के उद्देश्यों का सम्बंध जीवन के साध्यों के साथ है। दर्शन इस बात का निर्धारण करता है कि जीवन के उद्देश्य क्या होना चाहिये और इन उद्देश्यों का प्रत्याक्षीकरण शिक्षा दर्शन द्वारा होता है। टी0पी0 नन ने लिखा है– ''शिक्षा की प्रत्येक योजना अन्ततोगत्वा व्यावहारिक दर्शन है और जीवन के प्रत्येक बिन्दु को आवश्यक रूप से स्पर्श करती है।'' अतः शिक्षा का

कोई भी उद्‌देश्य जो निश्चित रूप से पथ प्रदर्शन करने के लिये पर्याप्त रूप से स्थूल है, जीवन के आदर्शों से सम्बंध रखते हैं, क्योंकि जीवन के आदर्श भिन्न होते हैं, इनकी भिन्नता शैक्षिक सिद्धान्तों में अवश्य प्रतिबिम्बित होगी जैसे –

- आदर्शवाद के अनुसार सच्ची वास्तविकता, आध्यात्मिकता और विचार है। तो रॉस एवं रस्क के अनुसार ''शिक्षा का मुख्य उद्‌देश्य व्यक्तित्व का उत्कर्ष एवं आत्मनुभूति और व्यक्तित्व का मुख्य लक्षण सार्वभौमिक मूल्य से युक्त होना।
- प्रकषतिवाद के अनुसार मनुष्य इन्द्रियों एवं विभिन्न शक्तियों का समन्वित रूप है और ज्ञान एवं सत्य का आधार इन्द्रियानुभव होता है तो शिक्षा का उद्‌देश्य होना चाहिये उचित सहज सम्बद्ध क्रियाओं का निर्माण, जीवन की तैयारी, आत्मसंरक्षण, मूल प्रवषत्तियों का शोधन।
- यथार्थवाद के अनुसार– जगत में जिसका अस्तित्व है वही सत्य है। सत्य वास्तविकता का सारतत्व प्रक्रिया है। इस का प्रभाव इनके शिक्षा पर स्पष्ट परिलक्षित हुआ और शिक्षा का उद्‌देश्य जॉन लॉक के अनुसार– ''बालक में सद्‌गुण, बुद्धिमान, सदाचरण तथा सीखने की शक्ति का विकास करना ही शिक्षा है।''
- प्रयोजनवाद अर्थ का सिद्धान्त– सत्य का सिद्धान्त, ज्ञान का सिद्धान्त और वास्तविकता का सिद्धान्त देता है और प्रयोजनवादियों के अनुसार शिक्षा के उद्‌देश्य स्थायी रूप से बनाये नहीं जा सकते। उनमें समय और मनुष्य की आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तन किया जाना चाहिये।

- **पाठ्‌यक्रम निर्धारण में–** दर्शन का दूसरा भाग ज्ञान मीमांसा होता है और इसमें ज्ञान के स्वरूप की व्याख्या की जाती है। शिक्षा दर्शन के लिये प्रश्न की उत्पत्ति होती है। क्या पढ़ाया जाय ? और क्यों पढ़ाया जाय? इस आधार पर शिक्षा की पाठ्‌यचर्या का निर्धारण भी शिक्षा दर्शन के सहयोग के बिना नहीं हो सकता क्योंकि पाठ्‌यचर्या शिक्षा के उद्‌देश्य जीवन के उद्‌देश्यों से प्रभावित होते हैं और उद्‌देश्यों की विविधता के कारण पाठ्‌यक्रम में भी विविधता होगी। पाठ्‌यक्रम निर्धारण में शिक्षा दर्शन विविध काल एवं परिस्थितियों के अनुसार पाठ्‌यचर्या की जानकारी देता है और अपने लिये उपयुक्त पाठ्‌यक्रम के चुनाव में सहयोग देता है। उदाहरणार्थ–

- आदर्शवादी शिक्षा का उद्‌देश्य जीवन के शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति है, तो उन्होनें पाठ्‌यक्रम में मानवीय विचारों एवं मूल्यों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है, और पाठ्‌यक्रम विचार केन्द्रित है।

- प्रकृतिवादी बालक के स्वाभाविक विकास पर अधिक बल देता है। इनके अनुसार शिक्षा का उद्‌देश्य व्यक्तिकता का विकास करना है अतः पाठ्‌यक्रम में बालक की तत्कालीन आवश्यकताओं, रूचियों, क्षमताओं आदि को आधार बनाया जाता है, पाठ्‌यक्रम बात केन्द्रित होता है।
- प्रयोजनवादी उपयोगिता एवं व्यावहारिकता पर बल देते हैं। यह बालक को अपने मूल्यों को स्वयं निर्मित करने वाला मानते है। अतः पाठ्‌यक्रम में बालक की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये उपयोगी क्रियाओं को स्थान दिया जाता है।
- यथार्थवादी प्रत्यक्ष पर विश्वास करते हैं, अतः पाठ्‌यक्रम सैद्धान्तिक के बजाय अधिक व्यावहारिक होता है और जीवन की वास्तविक क्रियाओं को अधिक महत्व दिया जाता है।

इन सभी के आधार पर हम यह विचार कर सकते हैं कि प्रत्येक स्तर की शिक्षा में हमारा पाठ्‌यक्रम विचार से आदर्शवादी, कर्म से प्रकृतिवादी एवं प्रयोजन से यथार्थवादी होना चाहिये।

रस्क ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि ''शिक्षा दर्शन पर पाठ्‌यक्रम के सम्बंध में शिक्षा जितना निर्भर है, उतनी अन्य किसी शैक्षिक प्रश्न के सम्बंध में नहीं है।''

- **शिक्षण विधियों का ज्ञान**– दर्शन के ज्ञान मीमांसा के अन्तर्गत मानव बुद्धि, ज्ञान और ज्ञान प्राप्त करने की विधियों पर प्रकाश डाला जाता है। शिक्षा दर्शन शिक्षा व्यवस्था हेतु उपयोगी शिक्षण विधियों की जानकारी भी देता है, और किसको कब और किस प्रकार, पढ़ाना चाहिये, इस प्रकार के विचार अनेक शिक्षा शास्त्रियों के मिलते हैं, जिससे कि अध्यापक वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अपने आदर्श एवं शिक्षण उद्‌देश्यों के लिये उचित शिक्षण विधियों का चुनाव कर सकता है। उदाहरणार्थ सुकरात ने अपने दार्शनिक विचारों के अनुकूल प्रश्नोत्तर विधि को जन्म दिया। प्लेटो ने संवाद विधि अरस्तु ने आगमन एवं निगमन विधि को खोजा। प्रकृतिवादी रूसो ने बालक की अत्यधिक स्वतंत्रता को महत्व देते हुये स्वानुभव तथा स्वक्रिया बल दिया। मान्टेसरी ने इन्द्रिय यथार्थवाद के आधार पर इन्द्रिय प्रशिक्षण को शिक्षण पद्धति के रूप में अपनाया। फ्राबेल ने किण्डरमार्टन पद्धति को जन्म दिया इस प्रकार भिन्न–भिन्न शिक्षाशास्त्रियों द्वारा भिन्न पद्धति को खोजा गया शिक्षा दर्शन इन शिक्षण पद्धति के प्रयोग का कारण एवं महत्व की विवेचना कर हमारा दृष्टिकोण और स्पष्ट करता है।

- **शिक्षा में अनुशासन सम्बंधी दृष्टिकोणों का ज्ञान–** शिक्षा दर्शन में विभिन्न दर्शनों एंव उनके द्वारा व्यक्त अनुशासन की समस्या एवं विचारों का अध्ययन किया जाता है। यह भावी शिक्षक को उपयुर्क्त अनुशासन विधियों को समझने तथा चुनाव करने में सहायक होती है। रस्क का कथन है– ''विद्यालय कार्य के अन्य किसी भी पक्ष की अपेक्षा अनुशासन किसी व्यक्ति या युग की दार्शनिक पूर्व धारणाओं को अधिक प्रत्यक्ष रूप से प्रतिबिम्बित करता है। उदाहरणार्थ– आदर्शवादी मुख्यतः आत्म नियंत्रण एंव शिक्षक के प्रभाव द्वारा अनुशासन की स्थापना को महत्व देते है, तो प्रकृतिवादी प्राकृतिक नियमों द्वारा दण्ड विधान को महत्व देते थे। प्रयोजनवादी अनुशासन स्थापना हेतु रूचि, आनन्दपूर्ण सहयोगी क्रियाओं को महत्व देते हैं। इस प्रकार अनुशासन मुख्यतः दमनात्मक, प्रभावात्मक, मुक्त्यात्मक एवं सामाजिक अनुशासन के रूप में पाया जात हैं। भारतीय परिप्रेक्ष्य में हम प्रभावात्मक, मुक्त्यात्मक एवं सामाजिक अनुशास को महत्व देते हैं। रस्क ने लिखा है– ''प्रकृतिवादी दर्शनशास्त्र में नैतिक मानदण्डों की प्रमाणिकता को अस्वीकार करके बालक की जन्मजात मूल प्रवृत्तियों को प्रकट होने में सहयोग देता है। प्रयोजनवादी छात्रों के आचरण को सामाजिक स्वीकृति पर ही नियत्रित करता है। दूसरी ओर आदर्शवादी मानव व्यवहार को नैतिक आर्दशों के अभाव में अपूर्ण मानता है।''
- **शिक्षक–शिक्षार्थी के सम्बन्धों का ज्ञान–** दर्शन की तत्व मीमांसा में मनुष्य के स्वरूप और आचार मीमांसा में करणीय और अकरणीय कर्मों की विषद व्याख्या की जाती है। शिक्षा दर्शन विभिन्न विचार धाराओं के अनुसार शिक्षक एवं शिक्षार्थी का स्वरूप एवं उनके कर्तव्य निश्चित करता हैं। उदाहरणार्थ– प्रकृतिवादी मानव का विकास मूल शक्तियों के आधार पर ही होता है। अतः वे शिक्षक का कर्तव्य शिक्षार्थी के स्वभाविक विकास में सहयोग मानते हैं। आदर्शवादी शिक्षक को महत्वपूर्ण स्थान देता है रास के अनुसार प्रकृतिवादी कंटीली झाड़ियों से सन्तुष्ट हो सकता है पर आदर्शवादी सुन्दर गुलाबी फूल ही पसन्द करता हैं। शिक्षक छात्र को उच्चतर सीमा तक पहुॅचाने का प्रयास करता है, जहां वह अपने आप नहीं पहुॅच पाता। भारतीय शिक्षा में भी गुरू का स्थान सर्वोपरि माना गया है।
- **शैक्षिक प्रशासन का ज्ञान–** शिक्षा दर्शन इस बात का अध्ययन करता है कि नियोजित शिक्षा की प्रक्रिया को चलाने के लिये विद्यालयों का क्या स्वरूप होना चाहिये। शिक्षा दर्शन के अभाव में हम विद्यालय प्रशासन का स्वरूप निर्धारित नहीं कर सकते। विद्यालय का आन्तरिक प्रशासन कैसा हो और आचार्य एवं अध

यक्ष कैसा हो यह दर्शन का प्रश्न है। विद्यालय की आन्तरिक व्यवस्था समाज के दर्शन पर निर्भर करती है यदि समाज लोकतांत्रिक दृष्टिकोण का है तो हम यह तय कर लेते हैं कि विद्यालय की प्रशासन लोकतांत्रिक होगा।

- **शिक्षा की अन्य समस्याओं का दार्शनिक हल**– दर्शन के अभाव में शैक्षिक समस्याओं का वास्तविक समाधान, ढूँढना कठिन है। शिक्षा दर्शन, दर्शन के विभिन्न विचार धाराओं को अपने कसौटी में कसकर वास्तविक हल ढूढंने में सहायक होता है विश्व परिवर्तनशील है और आजकल यह परिवर्तन बड़ी तेजी से हो रहा है। हमारी सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति भी तेजी से बदल रही है। विज्ञान के आविष्कारों ने हमारे जीवन को पूर्णतया बदल दिया है। शिक्षा को इसके साथ कदम मिलाकर चलना है अन्यथा हम आने वाले समय में अपने आपको सुरक्षित नहीं रख सकेंगे। पर हमें कितना बदलना है और कितना नहीं जितना बदलना है, वह क्यों और जितना नहीं बदलना है वह क्यों इस सबका उत्तर तो वही दे सकता है जिसने शिक्षा दर्शन का अध्ययन किया हो।

बोध प्रश्न–

टिप्पणी–

क– क–नीचे दिये गये रिक्त स्थान में अपना उत्तर लिखिए।

ख– इकाई के अन्त में दिये गये उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

6 शिक्षा दर्शन उद्देश्य निर्धारण में क्या सहायता करता है?

....

7 शिक्षा दर्शन की पाठ्यक्रम निर्धारण में क्या भूमिका है?

....

7.1 सारांश

इस सम्पूर्ण इकाई में हमने पढ़ा कि जब हम शिक्षा में दार्शनिक दृष्टिकोण अपनाते हैं तो शिक्षा दर्शन का जन्म होता है। यह शिक्षा दर्शन शिक्षा के एक शाखा के रूप में जिसमें यह बताया जाता है कि दर्शन में मौलिक सिद्धान्तों की खोज होती है और उन सिद्धान्तों को शिक्षा में व्यवहष्त किया जाता है। शिक्षा दर्शन में दार्शनिक सिद्धान्तों का शिक्षा के क्षेत्र में व्यवहार किस प्रकार होता है और होना चाहिये, इसे बताया जाता है। हमने यह भी पढ़ा है कि शिक्षा दर्शन एक नया क्षेत्र है, जिसमें शैक्षिक

समस्याओं पर दार्शनिक दृष्टिकोण से विचार किया जाता है। पहले से सिद्धान्तों को नहीं बनाया जाता है, वरन् शैक्षिक समस्याओं को हल करने के लिये ही विचार होता है।

4.8 अभ्यास कार्य

1. शिक्षा दर्शन की क्या परिभाषा है? इसके अध्ययन की क्यों आवश्यकता है?
2. शिक्षा पद्धति का अध्ययन विस्तार क्या है? इसका शिक्षण की क्रिया में क्या महत्व है?

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर–

1. शैक्षिक दर्शन शिक्षा में दर्शनशास्त्र की अनुप्रयुक्त शाखा है।
2. शिक्षा दर्शन की समस्याओं के अध्ययन में दर्शन का प्रयोग होता है।
3. दर्शन शिक्षा के लिये विचारात्मक पक्ष एवं प्रयोग के रूप में है।
4. शिक्षा में दर्शन का प्रयोग उसके विभिन्न अंगों के निर्धारण हेतु किया जाता है।
5. शिक्षा दर्शन का मुख्य विषय क्षेत्र उसके सम्प्रत्यय, प्रशासन, आवश्यक पाठ्यक्रम शिक्षण विधियों, संसाधन, अध्ययन, अध्यापन का वातावरण है।
6. दर्शन जीवन दर्शन का निर्धारण करता है, तो शिक्षा उसका प्रत्यक्षीकरण करता है शिक्षा दर्शन विभिन्न सम्प्रदायों के अनुसार जीवन दर्शन का एवं शिक्षा के उद्देश्यों की जानकारी दे अपने शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण का मार्ग प्रशस्त करता है।
7. क्यों पढ़ाया जाय? क्या पढ़ाया जाय? यह दर्शन के ज्ञान मीमांसा का विषय क्षेत्र है। और इस आधार शैक्षिक उद्देश्यों की प्रति हेतु पाठ्यचर्या के निर्धारण का मार्ग प्रशस्त होता है।

4.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

रस्क आर0आर0 (1972) : *शक्षा के दार्शनिक आधार*, राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

Adams J : *Educational Theories, London Erenest Benn*

चतुर्वेदी एस0आर0(1970) : *शिक्षा दर्शन*, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, लखनऊ

ओड0एल0के0(2005) : *शिक्षा की दार्शनिक पष्ठभूमि*, राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।

पाल गुप्ता एवं मोहन (1994)		*शक्षा दर्शन*, कैलाश प्रकाशन, कल्याणी देवी, इलाहाबाद।
Bhatia B.D. (1960)	:	*Theory & Principles of Education,* D Doaba House.